श्रीमती सावित्री देवी वर्मा की 'भारत के वीर सपूत' पुस्तक के संस्मरण बहुत रोचक और ताज़े हैं। पुस्तक में पाक-भारत संघर्ष में शहीद हुए भारतीय वीर सैनिकों के अमर बलिदान की गाथाएं हैं जो इतिहास में स्वर्णाक्षरों में अंकित होंगी।

युद्ध के मोर्चे पर अलौकिक वीरता दिखानेवाले ये सूरमा कौन थे, कहां के थे और उनका घरेलू जीवन कैसा था—लेखिका ने अपने प्रयत्नों से उनका यह परिचय भी दे दिया है। पाक-भारत संघर्ष पर अब तक जितना साहित्य प्रकाशित हुआ है—यह पुस्तक अपनी प्रामाणिकता और रोचकता के कारण उस सबसे अलग है।

आज देश को गर्व है अपने इन वीर सपूतों पर। और यह हमारा सौभाग्य है कि इनमें से कुछ रण-बांकुरे इस समय भी देश-रक्षा के कार्यों में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं और राष्ट्र के लिए आदर्श प्रस्तुत कर रहे हैं।

सावित्री देवी वर्मा

भारत के वीर सपूत

राजपाल एण्ड सन्ज़, कश्मीरी गेट, दिल्ली

मूल्य : चार रुपये

प्रथम संस्करण, १९६८

BHARAT KE VIR SAPOOT by Savitri Devi Verma
Memoirs of War 4.00

दो शब्द
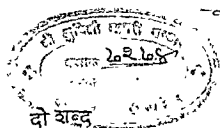
एक कहावत है कि अन्त भला तो सब भला। पाकिस्तान हमारा पड़ोसी देश है। हम एक ही भूमि मे पलकर बडे हुए हैं। १९४७ में देश का बटवारा हुआ। खैर, भाई-भाई का बटवारा हो ही जाता है। पर इसानियत का यह तकाजा है कि अलग होकर भी वे भाई ही बने रहें। पड़ोसी की तरक्की हो तो अपना भी लाभ ही है।

पर कटु सत्य यह है कि पाक-भारत परस्पर टकरा गए। इस सन्दर्भ मे भारतीय वीरो ने जो अद्भुत वीरता का परिचय दिया, वह भारतवासियो को चिरकाल तक स्मरण रहेगा।

वर्त्तमान पीढी और आने वाली पीढी के लिए हमें नया इतिहास लिखना है। उन वीरो की कहानिया लिखनी हैं जिन्होंने देश की स्वतन्त्रता के लिए अपने प्राणो की आहुति दी। जीवन सत्य है, पर मृत्यु उससे भी बडा सत्य है। मृत्यु भी जिनसे डर जाए जिनके आगे झोली फैलाकर सहमी-सी खडी रहे, जो हसते-हसते अपने प्राण मृत्यु की झोली मे डाल दें, ऐसे रण-बाकुरे ही मातृभूमि का शृगार करते हैं।

मैंने इस पुस्तक में पाक भारत-सघर्ष में काम आए भारतीय रणबाकुरो की सच्ची कहानिया दी हैं। मैंने श्रीमती भूपेन्द्रसिंह, मिसेज़ खन्ना, क० खुशवन्तसिंह के पिता सरदार ज्ञानसिंह, क० किरण सेठ के माता-पिता आदि से इण्टरव्यू लेकर उनकी कहानी लिखी है। जिन लोगों को मैं व्यक्तिगत

रूप में जाकर नहीं मिल सकी उनके परिजनों को पत्र लिखा, उनके गांव के पंचायत मुखिया से पत्र-व्यवहार किया और इस प्रकार जहां तक हो सका, उन वीरों के जीवन के विषय में तथ्य प्राप्त करने की भरसक कोशिश की।

फिर भी यह पुस्तक कोई इतिहास नहीं है। इतिहास तो हमेशा खोज का विषय रहा है और यथार्थता को सामने लाना इतिहासज्ञों का काम है। इसपर भी मेरी यह पुस्तक वीरों को भाव-भरी श्रद्धांजलि देती है। साथ ही देश की नई पीढ़ी के लिए एक आलोक भी प्रस्तुत करती है।

अधिकांश पाठकों को यह जानने की इच्छा होगी कि लड़ाई कैसे शुरू हुई, तथा कैसे वन्द हुई और अन्तिम समझौता क्या रहा ? इसीलिए पुस्तक के आरंभ में ये सूचनाएं दे दी गई हैं। इसका अभिप्राय किसी देश पर दोषारोपण करना नहीं है। पर इतिहास के तथ्य चाहे अतीतकाल की गाथा वनकर रह जाएं, पर उन्हें मिटाया नहीं जा सकता। जिनसे हम लड़े हैं, आज वही हमारे मित्र वन जाएं तो इससे वढ़कर और अच्छी सौभाग्य की वात क्या हो सकती है।

—सावित्री देवी वर्मा
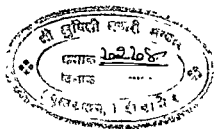
क्रम

इन पाकिस्तानी सैनिकों ने यह भी कहा कि उन्हें पाकिस्तान में यह निरन्तर बताया जाता था कि भारतीय सेना जम्मू-कश्मीर के लोगों पर भयंकर जुल्म कर रही है, पर जम्मू-कश्मीर पहुंचकर उन्होंने देखा कि यह बात बिलकुल झूठ है। उन्होंने कहा कि भारतीय सेना और जम्मू-कश्मीर के लोगों के संबध सौहार्दपूर्ण और घनिष्ठ हैं।

इन पांच पाकिस्तानी सैनिकों में एक सैनिक पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर के क्षेत्र का था और उसने बताया कि अब पाकिस्तान के अधिकारी युद्धविराम रेखा की चौकियों पर पाकिस्तानी सेना की पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर की बटालियनों के सैनिकों को तैनात नहीं करते। उसने बताया कि अब पाकिस्तान के अन्य भागों के सैनिकों को इन चौकियों पर तैनात किया गया है। ये लोग पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर के लोगों पर बेहद जुल्म कर रहे हैं। कश्मीर में घुसने वाले हमलावरों के बारे में इस सैनिक ने कहा कि अब इन लोगों के समक्ष भारतीय फौजों के सामने हथियार डालने के अलावा अन्य कोई चारा नहीं है। वे यह अच्छी तरह जान गए हैं कि उन्हें करारी हार खानी पड़ी है। पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर में भी इनके लौटने का सवाल नहीं उठता क्योंकि वे अच्छी तरह जानते हैं कि पाकिस्तानी अधिकारी उनकी नाकामयाबी के कारण उन्हें गोली से उड़ा देंगे।

पाक की एक योजना

प्रतीत होता है कि कच्छ में आक्रमण की घटना के बहुत

पहले से ही भारत के विरुद्ध तैयारी चली आ रही थी। कई सालों से कश्मीर में 'जेहाद' की बात भी होती रही और हाल ही में अल्जीरियाई युद्ध के ढंग का ध्यानपूर्वक अध्ययन तथा मनन भी होता रहा। इसी के साथ रजाकारों और मुजाहिदों की भर्ती और उनका प्रशिक्षण भी जारी रहा।

यह बात एक दस्तावेज़ से स्पष्ट हो जाती है कि पाकिस्तान के इरादे थे कि भारत में फूट पैदा की जाए। कश्मीर में गुमराह लोगों को फुसलाकर गड़बड़ कर दी जाए और फिर कश्मीर के लोग भी जेहाद कर रहे हैं यह कहकर घुसपैठियों को भेजकर वहां विद्रोह का वातावरण पैदा कर दिया जाए। और फिर अचानक हमला करके कश्मीर पर अधिकार करना आसान होगा।

कश्मीर में पकड़े गए हमलावरों से ज़िरह करने पर पता चला कि हमलावरों को प्रशिक्षण देने का कार्य २६ मई, १९६५ से शुरू कर दिया गया था। हमलावरों का प्रशिक्षण १२वीं डिवीज़न के, जिसका सदर मुकाम मरी में था, जनरल आफीसर कमांडिंग मेजर जनरल अख्तर हुसैन मलिक के निर्देशन में शुरू किया गया।

जिब्राल्टर सेना

तथाकथित इन जिब्राल्टर सेनाओं के लिए चार प्रशिक्षण केन्द्र स्थापित किए गए। आठ टुकड़ियां कायम की गईं। जिनमें से प्रत्येक में ११० व्यक्तियों की छः कम्पनियां शामिल थीं। प्रत्येक कम्पनी में ११० व्यक्ति रखे गए और उनके नाम भी

खालिद, खिलजी, सलाहुद्दीन, कासिम, ग़ज़नवी और बाबर जैसे ऐतिहासिक पुरुषों के उत्तेजक नामों पर रखे गए। प्रत्येक कम्पनी (दस्ते) को पाकिस्तान की नियमित सेना के अधिकारियों के अन्तर्गत रखा गया। इनमें मेजर अथवा कप्तान जैसे अधिकारी शामिल थे। इस प्रकार छः सप्ताहों के प्रशिक्षण के बाद हमलावर कार्रवाई के लिए तैयार हो गए। सेना के कमाण्डरों को मरी में जुलाई के दूसरे सप्ताह में बुलाया गया और उनके समक्ष स्वयं राष्ट्रपति अयूब खां ने भाषण किया।

अपनी रिपोर्ट में एक स्थान पर जनरल निम्मो ने लिखा है, "राष्ट्रसंघीय पर्यवेक्षकों ने गिरफ्तार किए गए एक हमलावर से जब पूछताछ की तो उसने बताया कि वह १६ आजाद कश्मीर पदाति बटालियन का सैनिक है और उसके आक्रामक दल में लगभग ३०० सैनिक शामिल हैं और सौ मुजाहिद भी (गुरिल्ला युद्ध में प्रशिक्षित सशस्त्र नागरिक)।"

७-८ अगस्त को पुंछ क्षेत्र में जो घटनाएं घटीं उनकी पुष्टि राष्ट्रसंघीय प्रेक्षक ने की है। हमलावरों की संख्या एक हज़ार से अधिक बताई गई। उपलब्ध जानकारी से यह पता चला है कि कुछ हमलावर युद्धविराम रेखा को पार कर यहां पहुंचे। राष्ट्रसंघ ने भी पाकिस्तान को दोषी पाया।

हमलावरों की सारी योजना विफल इस कारण हो गई कि उन्हें स्थानीय सहयोग प्राप्त नहीं हो सका। यह धारणा कि कश्मीरी भारत से तंग आ गए हैं और मुक्ति पाने के लिए छटपटा रहे हैं तथा विद्रोह को भड़काने के लिए केवल एक चिनगारी की ज़रूरत है, बिलकुल निराधार निकली। इसी प्रकार पाकि-

स्तान का यह अन्दाज गलत निकला कि भारत में पाकिस्तानी हमले का मुकाबला करने की ताकत नहीं है।

हमलावरों की मूल योजना यह थी कि १ अगस्त से लेकर ५ अगस्त के बीच कश्मीर घाटी में निश्चित स्थानो पर एकत्र होकर जम्मू-श्रीनगर सड़क को छिन्न-भिन्न कर दिया जाए। प्रतिवर्ष ८ अगस्त को घाटी में विशाल सख्या में लोग आकर स्थानीय सन्त पीर दस्तगीर साहब के मेले में शामिल होते हैं। हमलावरो ने इन्हीं लोगों में घुलमिलकर अज्ञात रूप में श्रीनगर पहुंच जाने की कल्पना कर रखी थी। ६ अगस्त के दिन, जो शेख अब्दुल्ला की गिरफ्तारी का वार्षिक दिन भी पड़ता है, हमलावरों ने क्रान्ति का दिन चुन रखा था। संघर्ष समिति और जनमत गणना मोर्चा ने भी इसी दिन राजधानी में प्रदर्शन की योजना बना रखी थी। हमलावरों ने इसलिए इसी दिन एकाएक विमानस्थल, रेडियो स्टेशन और अन्य कई महत्त्वपूर्ण स्थानों पर कब्जा कर लेने की सुन्दर कल्पना कर रखी थी और उनकी सारी योजना का लक्ष्य ऐसा ही था।

इसी दिन क्रान्तिकारी परिषद् की योजना भी तैयार की गई थी और फिर पाकिस्तान को सहायता के लिए बुला भेजने की योजना बना ली गई थी।

इस दिन के लिए रेडियो पर प्रसारित करने के लिए जो 'घोषणापत्र' और 'मुक्तियुद्ध' आदि तैयार किए गए थे उनकी भाषा भी बड़ी दिलचस्प थी। घोषणापत्र में कहा गया था कि कश्मीर के बहादुरो, आज वह दिन आ पहुंचा है जब कि हम जम्मू और कश्मीर की राष्ट्रीय सरकार स्थापित कर रहे हैं

और साम्राज्यवादी भारत और कश्मीर के वीच जो भी सन्धियां हुई थीं, उन्हें समाप्त करने जा रहे हैं।

लेकिन यह सब कुछ नहीं हुआ। हमला बेकार और नाकाम कर दिया गया। हमलावर छिन्न-भिन्न होकर इधर-उधर भटक गए और बुरी तरह कुचल दिए गए।

हमारा स्पष्टीकरण

८ सितम्बर ६५ को रक्षामंत्री श्री चव्हाण ने अपनी रणनीति का स्पष्टीकरण करते हुए कहा कि शत्रु के घुसने पर शुरू में हमने केवल युद्धविराम रेखा तक ही कार्रवाई की परन्तु पाकिस्तान ने अन्तर्राष्ट्रीय सीमा को पार करके छम्ब क्षेत्र में भारी टैंकों और तोपों द्वारा आक्रमण कर दिया और इस प्रकार युद्ध के क्षेत्र को वढ़ा दिया। इसके बाद उसने अमृतसर पर और जम्मू-कश्मीर राज्य में अनेक स्थानों पर हवाई हमले किए। सीमा पर जहां लड़ाई हो रही थी, ये सव स्थान वहां से काफी दूर थे। इस स्थिति में आत्मरक्षा के लिए हमारे पास पश्चिमी पाकिस्तान के आक्रमणकारी अड्डों के खिलाफ कर्रवाई करने के सिवा और कोई चारा न रहा। जिस उद्देश्य से हम पंजाव में सीमा पार कर वढ़े, अर्थात् जोड़ियां-अखनूर क्षेत्र में पाकिस्तानी फौजों के दवाव को हटाने के लिए, वह पूरा हो गया, और पाकिस्तानी फौजों को जौड़ियां-अखनूर क्षेत्र में पीछे हटना पड़ा तथा हमारी सेना उनका पीछा कर रही है। परन्तु अव भी कई स्थानों पर; खासकर युद्धविराम रेखा और अन्तर्राष्ट्रीय सीमा के पास शत्रु हमारे क्षेत्रों में है और उसे इन

जगहों से हटाना है। इस बीच पाकिस्तान ने पूर्वी मोर्चे पर भी लड़ाई की शुरुआत की है। पूर्वी पाकिस्तान से हमारा झगड़ा नहीं है और यद्यपि हमारी फौजें अपने क्षेत्र में पाकिस्तानी आक्रमण का मुकाबला करने के लिए खड़ी हो गई हैं फिर भी फिलहाल हम उस क्षेत्र में कोई ऐसी कार्रवाई नही करना चाहते जिससे युद्ध फैले, जब तक कि पाकिस्तान खुद आक्रमण करके हमको मजबूर न करे।

जैसा कि द्वारका बन्दर पर पाकिस्तानी नौसेना के हमले से पता चलता है कि उसका इरादा अन्य क्षेत्रो में भी युद्ध को फैलाने का है, तो हम उसकी सब कार्रवाई का मुकाबला करने के लिए तैयार हैं।

अपनी ओर से हमारी कार्रवाई का उद्देश्य केवल इतना ही है कि हम पाकिस्तान को समझा देना चाहते है कि हम भारत भूमि पर, जिसका कश्मीर एक भाग है, कोई भी हमला बर्दाश्त नही करेंगे, न हम अपने देश की अखण्डता को जरा भी धक्का लगने देंगे। अपने देश में पाकिस्तानी फौजी व्यवस्था का आक्रमण तो हमें रोकना ही है।

युद्धविराम घोषणा के बाद

हमारा देश युद्ध के लिए कभी इच्छुक नही था। युद्ध हम पर थोपा गया था। विजयी होकर भी युद्धविराम के लिए भारत ही अधिक इच्छुक था। जब युद्धविराम की घोषणा हो गई तो हमारे स्व० प्रधानमंत्री श्री लालबहादुर ने कहा था, "मुझे सदन की हर दिशा से एक ही आवाज सुनाई दी—वह

आवाज़ थी देशभक्ति की, अपने देश की प्रभुसत्ता और प्रादेशिक अखण्डता की, किसी भी हमलावर से रक्षा करने की राष्ट्रीय दृढ़ निश्चय की। यह सारे देश की जनता की आवाज़ थी जिसे उनके चुने हुए संसद् सदस्यों ने साफ-साफ शब्दों में व्यक्त किया था। माननीय सदस्यों को स्मरण होगा, जब पिछली बार अप्रैल में मैंने सदन में वक्तव्य दिया था तब उसमें मैंने देश के लोगों से दिली एकता पैदा करने के लिए अपील की थी। यह एकता आज पूरी तरह से पैदा हो गई है और इस संकट की घड़ी में इसे कारगर रूप में प्रदर्शित किया जा चुका है। परीक्षा के इस समय में वास्तव में एकता की यही सबसे बड़ी शक्ति हमारे पास थी।

"पाकिस्तान के हील-हवाल के बावजूद युद्धविराम हो चुका है। यह संभव है कि जब हम आगे की समस्याओं को निबटाने लगेंगे तो और कठिनाइयां तथा जटिलताएं पैदा हों। यह काम आसान नहीं, विशेषतः जब हम यह देखते हैं कि युद्धविराम मंजूर कर लेने के बाद भी प्रेसीडेंट अयूब खां तथा उनके विदेश मन्त्री ने धमकियां दीं। मैंने राष्ट्रसंघ के महासचिव को अपने १४ सितम्बर के पत्र में भारत के दृष्टिकोण को पूरी तरह स्पष्ट कर दिया है। सुरक्षा परिषद् के तीन प्रस्तावों के संबंध में जहां तक हमारा सवाल है हम समझते हैं कि यह पाकिस्तान की नियमित सेनाओं और घुसपैठियों दोनों के लिए लागू है। पाकिस्तान को इस बात की जिम्मेदारी उठानी होगी कि उसने हमारे जम्मू-कश्मीर राज्य में जो घुसपैठिये भेजे हैं उनको वापस ले। परन्तु महासचिव की रिपोर्ट के बावजूद भी घुस-

पैठियों को भेजने के लिए भी वह अपनी ज़िम्मेदारी स्वीकार नहीं कर रहा है। यदि पाकिस्तान अपनी इस बात पर अड़ा रहता है तो भारत को उन्हें जबरदस्ती बाहर निकालना पड़ेगा और उनके खिलाफ अपने ढंग से कार्रवाई करनी होगी। इसके अलावा भविष्य में हम उन व्यवस्थाओं को नहीं होने देंगे जिनसे घुसपैठियों के फिर से घुस आने का अंदेशा बना रहे।

"अपने जम्मू तथा कश्मीर राज्य के सम्बन्ध में जैसा कि सदन को मालूम है, हमारा मत दृढ़ और साफ है। यह राज्य भारत का अभिन्न अंग है, और भारतीय संघ की एक संवैधानिक इकाई है। अतः पुनः आत्मनिर्णय किए जाने का प्रश्न नहीं उठता। जम्मू तथा कश्मीर की जनता ने अपने आत्मनिर्णय के अधिकार को तीन आम चुनावों के जरिये जो वयस्क प्रौढ़ मताधिकार के आधार पर किए गए थे, उपयोग कर लिया है।

"हमले की चुनौती का सामना करने में भारत सरकार ने जिस नीति को अपनाया था, उसे जो सार्वजनीन सहयोग मिला है उसके लिए मैं कृतज्ञ हूं और इससे हमारा हौसला बढ़ा है। फिर भी मैं यह कहना चाहूंगा कि अब भी हमारे सामने खतरा बना हुआ है, हालांकि युद्धविराम हो चुका है। यह खतरा वास्तविक है। इन खतरों का सामना करने के लिए हमें तैयार रहना होगा और अपनी तैयारियों में किसी तरह की शिथिलता नहीं लानी होगी।

"घरेलू मोर्चे के बारे में भी दो शब्द कहना आवश्यक है। देश में जो उत्साह की लहर आई है उसे बनाए रखना आवश्यक

है। हमें अपनी रक्षा की तैयारियों को लगातार सुधारते रहना होगा। हमें अपनी सारी सीमाओं पर सजग रहना होगा। अपनी रक्षा-व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने के लिए सारे देश के लोगों को और बहुत त्याग करना होगा और आर्थिक विकास की गति को भी, हो सकता है, कुछ मन्द करना पड़े, ताकि हमारी रक्षा व्यवस्था में कहीं कमी न रह जाए।

"जो हमारे सामने काम हैं उनको अंजाम देने में हमें ऐसा व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाना होगा कि हमारा आदर्श आत्म-निर्भरता हो। इस ऐतिहासिक घड़ी में इस सम्माननीय सदन ने जो शानदार सहयोग किया है उसके लिए मैं अनुगृहीत हूं। अध्यक्ष महोदय, मैं सदन से अपील करता हूं कि वह आपको इस बात के लिए अधिकृत करे। भारत की रक्षा सेनाओं ने जो अत्यन्त ही शानदार काम किया है उनके प्रति पूरे सदन की सराहना आप उन तक पहुंचा दें। आपकी अनुमति से मैं यह भी सुझाव देना चाहूंगा कि मातृभूमि की रक्षा में जिन सैनिकों, हवाबाज़ों, पुलिस के जवानों तथा नागरिकों ने अपने प्राणों की आहुति दी है, उनकी याद में सदन के सभी सदस्य उठकर एक मिनट का मौन रखें।"

हमारा निश्चय

उन्होंने अपना निश्चय बताते हुए यह भी कहा था कि इस बात को याद रखिए कि जहां तक देश की राजनीति की बात है हरएक हिन्दुस्तानी है, हिन्दुस्तान का रहने वाला है, चाहे वह सिख हो, पारसी हो, मुसलमान हो, या हिन्दू हो। इस तरह की

वातों को चलाना एक गलत प्रचार करना है, दुनिया को यह वताना कि हम तो सिर्फ छोटी दृष्टि से इस वात को कह रहे है, गलत वात है तो आखिर चीन तो कोई मुसलमानी देश नही। आज हमने जिस तरह से पाकिस्तान की वात की, हमने उन्ही लफ्जो मे चीन के वारे में भी कहा। अगर वह हम पर हमला करता है, चाहे उसकी जो भी ताकत हो हम उसका भी पूरी तरह अपनी शक्ति और ताकत के साथ मुकावला करेंगे। तो यह मजहव और धर्म की वात नही है। यह तो अपने मुल्क की आजादी की, उसकी रक्षा की, उसकी हिफाजत की वात है। हमारे देश का एक इच, एक टुकड़ा भी कटकर नही जा सकता। उसको हमे वचाना है और उसके लिए हथेली पर जान रखकर हरएक भाई-वहन को आगे वढ़ना है।

एकता कायम रखें

देश ने वडी एकता दिखाई है, वड़ा मेल, आपस में सगठन, वडी डिसिप्लिन दिखाई। इसने एक नई जान देश के अन्दर पैदा की है और हमें भरोसा है, मुझे विश्वास है कि हम इस एकता को कायम रखेंगे। कोई इसको विगाड़ना चाहे, तो वह पाकिस्तान के हाथ में खेलेगा, यही मैं कहना चाहता हू। जो इस एकता को विगाड़ेगा, जो यहा आपस में झगड़ा पैदा करेगा, जो शान्ति तोडेगा उसको मैं समझूगा कि वह पाकिस्तान की मदद करता है और एक देशद्रोही है। इसलिए इस मेल, इस एकता को वनाए रखना है। हम यहा अगर आपस मे संगठित रहें, अपने खाने का इन्तजाम करने, अपने डिफेन्स को मजवूत करने

के लिए जो कुछ हमसे कहा जाए, उसे देने को हम तैयार हों और होंगे। यों मुझे विश्वास है कि हमारी फौजें, हमारे मैदान, में, लड़ाई के मैदान में, आगे जहां भी उनको मौका मिलेगा वे जी-जान से देश की आज़ादी की रक्षा करेंगी।

पंजाब पर उन्हें विशेष आस्था थी। जिस बहादुरी से पंजाब के सपूतों ने सीना तानकर इस खतरे का सामना किया था उसपर सारे देश को गौरव है। पंजाब के सपूतों को सम्बोधन करके स्वर्गीय लालबहादुर शास्त्री ने कहा था, "पंजाब के वीर तथा साहसी सपूतो, अब तुम भारत की सीमाओं के संरक्षक हो। इसलिए न ही तुम्हें स्वयं कोई ऐसी बात करनी चाहिए जो इस सीमावर्ती राज्य को कमज़ोर करे और न ही किसी और व्यक्ति को यह अनुमति देनी चाहिए कि वह तुम्हें पथभ्रष्ट कर सके। स्वार्थपूर्ण भावनाओं से ऊपर उठकर एक राष्ट्र-पुरुष के रूप में खड़े हो जाओ और अपने देश को दुश्मनों की घृणित चालों से बचाने तथा सारे राष्ट्र और अपने राज्य की आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिए कोई कोर-कसर उठा न रखो।"

हम शान्ति चाहते हैं

भ [illegible] ान्ति का पुजारी रहा है। पर शान्ति का प्रेमी है [illegible] ५रता कभी नहीं। यही आदर्श महात्मा गांधी [illegible] नेहरूजी भी अड़े रहे। उनके उत्तरा- [illegible] जी युद्ध की ढाल बनाकर शान्ति का [illegible] े, उन्होंने युद्ध के लिए युद्ध और शान्ति [illegible] ी पूजा की।

ताशकन्द सम्मेलन में जाने के पूर्व उन्होंने अपने एक भाषण में कहा था, "युद्ध करके हम नहीं जी सकते, किसी भी देश का अस्तित्व युद्ध की नींव पर कायम नहीं रह सकता। अस्तित्व रक्षा के लिए शान्ति का सच्चा मार्ग अपनाना पड़ेगा।"

प्रधानमंत्री ने घोषणा की है, "हमने जिस दृढ़ता से युद्ध का मुकाबला किया और विजय हासिल की उसी दृढ़ता और शक्ति से इस शान्ति समझौते का पालन भी करेंगे।" सारा देश इस घोषणा के पालन के लिए तैयार है।

ताशकन्द घोषणा

ताशकन्द घोषणा भारत और पाकिस्तान के बीच शान्ति और सद्भावना की घोषणा है। विश्व भर में इसे राजनीतिक सूझ-बूझ का महान कार्य और विश्व शान्ति में पूर्ण योग बताया जा रहा है। अनेक देशों ने बधाइयों के सन्देश भी भेजे हैं। अगर ईमानदारी से इसका पालन किया जाए तो इस उपमहाद्वीप के करोड़ों लोगों की सुख-समृद्धि और एशिया तथा विश्व में शान्ति स्थापित करने में महान योग मिल सकता है। दोनों देश अपने लोगों का रहन-सहन सुधारने के लिए आर्थिक विकास में अपने साधन लगा सकते हैं। दोनों देशों के बीच जो खतरनाक तनाव रहे हैं वे दूर हो जाएंगे। इस घोषणा-पत्र से शान्ति का जो आश्वासन मिला है, उससे दोनों देशों की सुरक्षा और मजबूत होगी।

ताशकन्द घोषणा के नौ मुख्य सूत्र इस प्रकार हैं :

(१) संयुक्त राष्ट्रसंघीय घोषणापत्र के अनुसार आपत्ति-

जनक विवादों के हल के लिए बल का प्रयोग नहीं करेंगे तथा विवादों को शान्तिपूर्ण तरीकों से हल करेंगे।

(२) दोनों देश युद्धविराम का पूरी तरह पालन करेंगे और ५ फरवरी तक सभी सशस्त्र लोगों को ५ अगस्त की रेखा तक लौटा लेंगे।

(३) दोनों नेता इस बात के लिए राज़ी हो गए कि दोनों देशों के सम्बन्ध एक-दूसरे के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप न करने के सिद्धान्त पर आधारित होंगे।

(४) दोनों देश एक-दूसरे के विरोध में किए जाने वाले प्रचार को रोकेंगे और ऐसे प्रचार को प्रोत्साहन देंगे जिससे दोनों देशों के मध्य मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों के विकास में सहायता मिले।

(५) दोनों देशों के राजनयिक सम्बन्ध सामान्य रूप से पुनः चालू होंगे तथा इस बारे में दोनों सरकारें वियना सम्मेलन के नियमों का पालन करेंगी।

(६) आर्थिक व्यापारिक और यातायात सम्बन्धी सम्बन्ध सामान्य किए जाएंगे तथा वर्तमान समझौतों को बनाए रखने के लिए कदम उठाएंगे।

(७) युद्धबन्दियों की वापसी के लिए अपने-अपने अधिकारियों को तुरन्त आदेश दिए जाएंगे।

(८) शरणार्थियों, निष्क्रान्तों और गैर कानूनी रूप से प्रवेश करने वालों की समस्या पर वार्ता जारी रखेंगे। निष्क्रमण रोकने के लिए उचित वातावरण तैयार करेंगे। तथा युद्ध में छीनी गई संपत्ति की वापसी के बारे में बातचीत करेंगे।

(६) दोनों देश उच्चस्तरीय तथा अन्य स्तरों पर बातचीत जारी रखेंगे। संयुक्त समितियों की स्थापना की आवश्यकता पर जोर दिया गया है।

ताशकन्द घोषणा शास्त्री जी की बुद्धिमत्ता, सूझ-बूझ और शान्तिप्रियता का स्मारक है। यह घोषणा हमारे देश को उनका अन्तिम उपहार है। वे चाहते थे कि हम शान्ति के लिए उसी लगन और साहस से काम करें जिससे हमने अपने सम्मान और एकता की रक्षा के लिए लडाई लड़ी। हम सबको चाहे हम किसी भी वर्ग के हों, शहरों में हों या गांवों में, भारत और पाकिस्तान के बीच शान्ति और मित्रता के मूल सिद्धान्तों के प्रति वफादारी से काम करना चाहिए जैसा कि ताशकन्द घोषणा पत्र में मांग की है। अफसोस तो इस बात का है कि केवल शान्ति की घोषणा ही यहां छाई, पर शान्ति का पुजारी ड्रामे के अन्तिम दृश्य का अभिनय कर शान्ति की निद्रा में वहीं सो गया।

भारत के वीर रण में शहीद हुआ करते हैं।
भागते नहीं अब्दुल हमीद हुआ करते हैं॥
ईद की खुशियों के लिए कुर्बानी देकर।
अगली पीढ़ियों के वहीद हुआ करते हैं॥

हमीद धाम का लाडला

धामपुर गांव में ईद का मेला लगा हुआ था। सड़क के किनारे लोगों ने दूकानें खड़ी कर ली थीं। उनमें तरह-तरह के खिलौने सजे हुए थे। आठ वरस का एक छोटा वालक हमीद अपने वावा की उंगली थामे मेले की रौनक देखता हुआ मज़े-मज़े में जा रहा है। वालक ने अपने लाल वटुए में दादी की दी हुई एक चवन्नी वहुत संभालकर रखी हुई है। वह जव किसी भी दूकान के पास से गुज़रता, कुछ देर ठिठक जाता परन्तु उसे किसी भी दूकान पर अपनी मनचाही चीज़ दिखाई नहीं पड़ी।

वावा ने पूछा—क्यों वेटा दादी ने जो चवन्नी दी थी उसे

क्या बटुए में ही बन्द रखोगे ? कुछ खिलौना नहीं खरीदोगे ?

—हमें, ये खिलौने पसन्द नहीं है।

बाबा हंस दिए। बोले—अच्छा चलो तुम्हें पहले गर्म-गर्म जलेबिया खिला दें।

जलेबिया खाते-खाते हमीद की नजर पास ही एक बिसाती की दूकान पर पडी। उसने जलेबियो का दोना बाबा को पकड़ाया और झट से एक तमचा तथा एक चाकू खरीदकर लौट आया। बाबा अपने पोते की पसद पर हस दिए।

घर आकर हमीद ने दादी से कहा—अम्मा, हम तुम्हारे लिए भी एक चीज लाए हैं। तुम्हें साग-सब्जी काटने में तकलीफ होती थी न, यह लो चाकू। और देखो हमारी मुर्गियों को चुराने वाले बिल्ले को दुरुस्त करने के लिए मैं यह तमचा लाया हूं। अब देखूगा कि यहा वह मुर्गी चोर कैसे आता है।

यह कहकर हमीद तमंचा साधकर पैतरा बदलकर एक बहादुर की तरह खड़ा हो गया। बाबा और दादी अपने होनहार पोते की बलइया लेने लगे। मा ने ओट में से देखा और मुसकरा दिया। बाप ने हमीद को गोदी में उठाकर कहा—बड़ा बहादुर बनेगा मेरा बच्चा। देखना एक दिन खानदान का नाम रौशन करेगा।

हमारी कहानी के नायक वीर हवलदार अब्दुल हमीद का जन्म १ जुलाई, १६३३ को उत्तरप्रदेश के गाजीपुर जिले के धामपुर गाव में हुआ था। उनके पिता खलीफा मुहम्मद उस्मान दर्जी का काम करते थे।
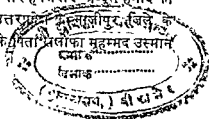
जन्म के समय वह बहुत कमज़ोर था। सौरी में ही वह बहुत बीमार हो गया। पर होनहार प्रबल थी कि वह दूध-पानी पाकर पनप गया। छुटपन से ही वह शैतान और चंचल था। स्कूल से भाग आता था। खेतों में दिनभर गुल्ली-डंडा, कनकौवे उड़ाता। होले (हरे चने) भूनकर खाता। उसके संगी-साथी थे गांव के ठाकुरों के लड़के। आपस में ऐसा प्यार कि मानो सगे भाई हों। शिवाजी उसके आदर्श थे। स्कूल में उनकी कहानी पढ़ी तो व्यूह रचाकर सिंहगढ़ विजय का खेल खेलना शुरू किया। छुटपन से ही अखाड़ेबाज़ी, लाठी भांजने और कसरत करने का बड़ा शौक था। कई बार पड़ौसी गांव की प्रतियोगिता में अपने गांव का नाम रौशन किया।

हमीद के कारण गांव के नौजवानों को भी कसरत करने का शौक हुआ, वे हमीद के शागिर्द बन गए। देखते ही देखते गांव में नौजवानों का एक ऐसा दल बन गया जो हमीद के नेतृत्व में अन्याय का प्रतिरोध करने के लिए डटा रहता था। एक बार गांव के एक गरीब किसान ने आकर कहा—भैया हमीद ज़मींदार ने आज अपने गुण्डों को लेकर हमारे खेत से धान कटवा ले जाने की धमकी दी है। अगर ऐसा हुआ तो हम तो भूखों मर जाएंगे।

यह सुनकर हमीद ने हाथ में गंड़ासा पकड़ा, लाठी संभाली और रात को उस नुनिया किसान के खेत पर पहुंच गए। जब रात के झुटपुटे में गुण्डे आते दिखाई दिए तो हमीद ने ललकारा कि खबरदार जो कोई भी आगे बढ़ा। मैं बीस को मारकर मरूंगा। पर देह में प्राण रहते यह अत्याचार उस नुनिया पर न होने दूंगा।

वीर हमीद की ललकार सुनकर वे सब गुण्डे सर पर पैर रखकर भागे।

एक बार की बात है उनके गाव में भगई नदी में खूब बाढ़ आ गई। नदी में एक युवती और उसकी मा छप्पर पकड़े बहती आ रही थीं। हमीद ने उनकी पुकार सुनी और फौरन नदी में छलाग लगा दी। वह दोनों को न केवल बचाकर ही ले आया परन्तु बरसाती नदी में नाव में बिठाकर उनके घर भी छोड़कर आया।

उसके गाववाले तथा सगी-साथी उसकी बातें कर करके अपने दोस्त को बड़ी भावुकता के साथ याद करते हैं कि इसमें कोई सन्देह नही कि इसान के सस्कार धीरे-धीरे बचपन से लेकर ही बनते हैं। छुटपन से ही वह बड़े अचूक निशानेबाज थे दर्जी-गिरी में उनका मन नही लगता था। शुरू से ही बड़े निडर, तथा होनहार थे। बड़े होकर सेहत से अच्छे, गाव के दुलारे बने। गाव के पास के स्कूल में उसने चौथी कक्षा तक शिक्षा पाई। जब कुछ बड़े हुए तो सेना में भर्ती होने का शौक उठा। एक बार १९५२ मे भी घर से भागकर गाजीपुर फौज में भर्ती होने आए थे। फिर किसी तरह समझाने बुझाने पर दर्जी की दुकान खोल-कर बैठ गए। पर भगवान को तो उन्हें यश देना था। उनके दिल में लगन थी कि कुछ ऐसा काम किया जाए कि ससार में नाम उजागर हो। फिर दो साल बाद जो उनका मन उचाट हुआ और कलकत्ते जाकर १९५४ में फौज मे दाखिल हो गए।

फौज में भी अपनी ईमानदारी और वफादारी से सबको खुश किया। अफसरों को जब किसी भरोसे के आदमी की खोज होती, कोई चीज़ या सन्देशा भिजवाना होता तो उनकी नजर

हमीद पर उठ जाती। वह बड़ी चौकसी और ईमानदारी से अपनी ड्यूटी निभाकर आते। यदि कभी उनके अफसर उनकी इस प्रकार की सेवा पर कोई पुरस्कार देना चाहते तो बड़ी विनम्रता से कहते; जनाब, इंसान इंसान के काम आता है। मुझे इनाम देकर लज्जित न करें। यदि खुदा ने चाहा और मैं सेना में अपनी बहादुरी दिखा सका तो इनाम लेने में गौरव महसूस करूंगा।

इसपर एक बार उनके एक अफसर ने उनपर खुश होकर कहा था—हमीद, तुम न केवल बहादुर ही हो पर वफादार और ईमानदार भी हो। यही खूबी एक न एक दिन तुम्हारे बड़े काम आएगी। और तुम ज़रूर कोई बड़ा काम कर दिखाओगे।

७ दिसम्बर, १९५४ को वे भारतीय सेना में भर्ती हो गए और १३ फरवरी, १९५६ तक यानी चार साल तक नसीराबाद (राजस्थान) के ग्रेनेडियर्स रेजीमेंटल ट्रेनिंग सेंटर में शिक्षा प्राप्त की और जल्द ही द्वितीय श्रेणी का प्रमाण-पत्र भी प्राप्त कर लिया। ट्रेनिंग खत्म होने पर तुरन्त उन्हें जम्मू और कश्मीर तथा उपूसी क्षेत्र में तैनात कर दिया गया। २९ वर्ष की उम्र में वे लांसनायक बना दिए गए। हमीद अपने काम में बहुत चौकस थे। उनके अफसर उनसे बहुत खुश थे। १९६२ में जब चीन ने उपूसी क्षेत्र पर हमला किया तो हवलदार अब्दुल हमीद ने शत्रुओं के दांत खट्टे कर दिए। इस बहादुरी पर उन्हें सैन्य सेवा मेडल दिया गया। इधर पाक के हमले से पहले जून १९६५ में ही उन्हें लांसनायक बना दिया गया था।

× × ×

हमीद के घर बेटा पैदा हुआ था। बाबा ने चिट्ठी लिखी थी कि कुछ दिन की छुट्टी लेकर यदि घर आ जाओ तो बच्चों से भी मिल जाओगे। दगाबाज़ चीनी दुम दबाकर भाग गए थे। जवानों को बारी-बारी से छुट्टियां मिलनी शुरू हो गई थीं। अपनी बारी से हमीद भी घर आया। गाव की पचायत ने हमीद का बड़ा स्वागत किया। गाव के मुखिया ने बधाई देते हुए कहा, · · · · · · विजय-

फिर उसके बाबा की तरफ मुड़कर बोले—बड़े मियां, अब मिठाई खिलाओ। हमीद शत्रुओं को खदेड़कर तरक्की पाकर आया है। तिस पर पोता पैदा हुआ है। तुमसा भाग्यवान तो कोई विरला ही होगा।

बड़े मियां ने अपनी मेंहदी से रंगी दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए कहा—क्यों नही मुखिया जी, सब आप लोगों की दुआ व खुदा की मेहर की बदौलत ही नसीब हुआ है। हमीद तो कहता है कि मैं दोनों बड़े बेटों को फौज में दाखिल कराऊंगा। हर खत में उनकी पढ़ाई ठीक से हो, इसी बात की ताकीद करता रहता है। भगवान ने चौथा पोता और दे दिया, मानो देश का और एक नया सिपाही पैदा हो गया। बस अब परसों सेमई ईद है, मैं खर्चा दूगा। यहीं पंचायत के चूल्हे पर सेमई बनाई जाए। खर्चा मेरा रहा।

हमीद को पहलवानी और शिकार का बड़ा शौक था। छुट्टियों में जब भी घर आते उनका अधिकांश समय अखाड़े में

तथा शिकार खेलने में गुज़रता। उनका निशाना बड़ा अचूक था। अपने बड़े बेटों को भी अखाड़े में ज़ोर करवाते। हसन तो उनके पीछे पड़ा था कि अब्बा अब की बार छुट्टियों में आना तो मेरे लिए भी एक बन्दूक ले आना। मैं भी निशानेबाजी का अभ्यास करूंगा। इसी मौज में कुछ महीने और गुज़र गए कि एक दिन सुना कि पाकिस्तान ने अचानक कश्मीर की सुन्दर घाटी पर चुपके-से हमला कर दिया। हमीद हर साल की तरह इस बार भी छुट्टी पर घर आया हुआ था कि उसे आर्डर मिला कि फौरन अपने यूनिट में वापस पहुंचो।

जाते समय हमीद की बीवी रसूलन बेगम ने आंखें भरकर पति की ओर देखकर खुदा से दुआ मांगी। पति ने कहा—बीवी, तुम घबड़ाओ मत। अब्बाजान यहां हैं। फिर तुम तो चार बेटों की मां हो। किस बात की फिक्र? और देखो एक सिपाही की बीवी को हमेशा दिलेर होना चाहिए। बेटों को होनहार बनाना ताकि देश का नाम रौशन कर सकें। उन्हें भी फौज में भर्ती करवाना।

अब्बाजान ने जाते समय हमीद की पीठ ठोककर कहा—हमीद बेटा, अपने देश की लाज बचाना। हम इसी धरती पर फले फूले हैं, आज धरती मां का कर्ज़ चुकाने का वक्त आया है। इन बदकार पाकिस्तानियों ने तो झूठे प्रचार द्वारा भारतीय मुसलमानों का सर नीचा कर दिया। तुम उन्हें जाकर बता दो कि दगाबाज़ो मेरी धरती मां के आंचल पर यदि तुमने नापाक पांव रखा तो तुम्हारी खैर नहीं।

बूढ़ी मां ने बलैयां लेकर कहा—अच्छा बेटा, खुदा

हाफिज !

भारतीय जवान पाकिस्तानी टैंको के लिए तैयार बैठे थे। खंदकों, बंकरों और ईख के खेतों में जवान हथियारबन्द होकर इंतजार में थे। एक जानकार का कहना है कि एक ओर कम सख्या में होते हुए भी भारतीय वीरों का यह साहस था कि वे प्रत्येक परिस्थिति का डटकर सामना कर रहे थे तो दूसरी ओर महाकाल कहे जाने वाले पैटन टैंकों में बैठे पाकिस्तानी फौजी घबरा रहे थे। वे बार-बार पीछे से हुक्म देने वाले अपने अफसरों से कह रहे थे कि हमें लौटने दिया जाए, हम और आगे नहीं बढ सकते।

ग्रेनेडियरों की एक बटालियन, जिसमें क्वार्टर मास्टर हवलदार हमीद था; भिक्कीविन्द-खेमकरण के मार्ग पर तैनात थी। इस क्षेत्र की रक्षा बडी चौकसी से की जा रही थी, क्योंकि यदि यह क्षेत्र शत्रु के हाथ में चला जाता तो हमारी एक डिवीज़न की पूरी योजना मिट्टी में मिल जाती। हमीद के जिम्मे यह काम सौंपा गया था। हमीद के एक साथी ने कहा—हवलदार साहब, सुना है कि पाकिस्तान अपनी बख्तरबद गाड़ियों तथा टैंकों से लैस होकर आगे बढता चला आ रहा है।

हमीद ने अपनी तलवार-सी मूछों पर हाथ फेरते हुए कहा, हां सरदार जी, आने दो उन्हें। हम भी कोई मिट्टी के लौंदे नहीं हैं। किसी मा के जाए हैं। सालों को ठीक न किया तो कहना।

सरदार जी चुटकी लेते हुए बोले—तो हवलदार जी आज साले व बहनोई का मुकाबला है। दिखता है कमबख्तों ने बरात

मे पूरी खातिर नहीं की थीं, सो ग्राज हम सब दोस्त ग्रापके साथ इन सालों की ग्रच्छी मरम्मत करेंगे।

—ग्रजी मरम्मत तो इनकी ऐसी होगी कि सात जन्म याद रखेंगे।

दूसरा साथी बोला—मगर भाई जान, सुना है कि इनकी बख्तरबन्द गाड़ियां ग्रौर तोपखाना बड़ा ज़बरदस्त है।

हमीद बोला—मेरे दोस्त, यह याद रखो कि लड़ाई मशीन नहीं, इंसान लड़ते हैं। फिर बेईमानों के हौसले कभी भी बुलन्द नहीं होते। मैं तो बेताब हो रहा हूं, इन लोगों को मजा चखाने के लिए।

दूसरे दिन ता० दस सितम्बर की सुबह ही पाकिस्तानियों ने पैटन टैंकों की पूरी रेजीमेंट के साथ हमला बोल दिया। उन्होंने सोचा होगा कि यदि हम भारतीय टुकड़ी को पहली बार में ही ग्रपने पैटन टैंकों से डरा लेंगे तो फिर पैटन टैंक हौग्रा बनकर इन पर छा जाएंगे। उनकी गड़गड़ाहट सुनकर ही ये लोग भाग जाया करेंगे।

९ बजते-बजते दुश्मन के टैंकों ने भारतीय सेना की ग्रग्रिम चौकी को घेर लिया। इस युद्ध में ग्रभिमन्यु की भांति कितने ही नौजवान ग्रफसर शत्रु के बीच फंसकर वीरगति को प्राप्त हुए, किन्तु उन्होंने शत्रु के मन्सूबों पर पानी फेर दिया। एक युवक भारतीय ग्रफसर अपना टैंक नष्ट हो जाने पर भी इतना ग्रदम्य साहसी निकला कि शत्रु द्वारा चारों ओर से घेर लेने पर भी ग्रपनी सैनिक टुकड़ी का संचालन करता रहा। उसने जब ग्रपने तोपचियों को शत्रु पर गोलाबारी करने का ग्रादेश दिया तो

वह समझकर हो दिया कि किसी भी समय कोई गोली उसका काम तमाम कर सकती है। तोपची ने कहा भी, किन्तु उस बहादुर ने हुक्म दिया, इस वक्त व्यक्तियों की चिन्ता करने की जरूरत नहीं, देश की रक्षा का सवाल है। अगर ढील बरती गई और शत्रु को रोका न गया तो बहुत बड़ी हानि उठानी पड़ सकती है। वह पैदल ही बेतार के तार से आदेश देता रहा। वह घायल अवश्य हो गया किन्तु उसने यह देख लिया कि उसकी कार्यकुशलता ने आठ टैंकों को उन आदमखोर शेरों की तरह जो फाड़ खाने के लिए आगे बढ रहे थे, धराशायी कर दिया है।

अब्दुल हमीद उस समय दूसरी ओर रिकायलेस तोपखाना टुकड़ी की कमान संभाले हुए थे। उन्होंने स्थिति की गंभीरता को भाप लिया और हिम्मत करके अपनी जीप पर लगी तोप का मुह शत्रु की ओर मोड़ दिया। इन्होंने शत्रु पर अन्धाधुध बमवारी की। यह देखकर शत्रु का एक पैटनटेंक इनकी ओर बढ़ आया। हमीद मौके की ताक में था ही, जैसे ही टेंक पास आया कि इन्होंने उसे रिकायलेस तोप से तोड डाला। शत्रु टेंक मे आग लग गई और हवलदार हमीद अपनी जीप को पैंतरा बदल कर बचा ले गए। भारतीयो ने भारतमाता की जय के नारे लगाए। पाकिस्तानी टेंक चालक बौखला उठे। अब एक साथ चार और टेंक हमीद की जीप की तरफ बढ़े। शत्रु ने टेंकों का घेरा डालकर जीप पर मशीनगनों से बम-वर्षा करनी शुरू की। वीर अभिमन्यु की तरह घिरा हुआ हमारा प्यारा हमीद उनका काल बन गया। उसने सोचा मौत ने घेरा तो डाल ही लिया है, पर अन्तिम बार इस मौत को भी ललकार कर ही मरूंगा।

कहते हैं ऐसे समय में मनुष्य की दैविक शक्तियां सजग हो जाती हैं। शत्रुओं को हमीद महामानव-सा प्रतीत हुआ। उन्होंने शत्रु के दूसरे टैंक को भी अचूक गोला मारकर तहस-नहस कर दिया। शत्रु बौखला उठे। अरे यह पैटन टैंक का काल बनकर कौन आया है ? एक तीसरे पैटन टैंक ने निशाना साधकर एक गोला हमीद के सीने की ओर मारा। घायल होकर गिरने से पहले हमीद ने तीसरे टैंक का भी सफाया कर दिया।

रणबांकुरे हमीद को गिरते देखकर उनके साथी कड़क उठे। उनमें नया जोश पैदा हो गया। वे व्यूह बनाकर शत्रु पर टूट पड़े। घमासान लड़ाई हुई। रणभूमि पैटन टैंकों की कब्रिस्तान बन गई। अनेक टैंक बेकाम हो गए। कईअच्छी हालत में भी भारतीय फौज के हाथ लगे। शत्रु टैंक छोड़-छोड़कर भाग निकले। उस दिन की जीत का सेहरा हमीद के माथे बंधा। पर वह वीरपुंगव सीने पर गोला झेलकर अपनी धरती माता की गोद में चिर निद्रा में सोया पड़ा था।

उसके साथियों ने ससम्मान उनके शव को उठाकर जीप में और कैम्प में ले आए। हमीद जिन्दाबाद ! हमीद की जय ! ! हमारा हमीद अमर है ! ! ! के नारे लगाते हुए उसके साथी उत्साह व दुख में डूबे हुए थे। उनके चेहरे आंसुओं से भींगे थे। चेहरे पर मर मिटने की हवस थी, अपने वीर साथी की बहादुरी पर वह अभिमान से फूले नहीं समा रहे थे।

भारत सरकार ने हमीद को परमवीर चक्र देकर सम्मानित किया। उत्तरप्रदेश सरकार ने उनकी पत्नी व बच्चों के लिए विशेष पेंशन बांध दी। गांववालों ने अपने गांव का नाम हमीद

धाम रखने में गौरव अनुभव किया। उसकी वीरता का सूचक एवं विजय स्तंभ गाव में खडा किया। अब उसकी जन्म तिथि एक पुण्य तिथि बन गई है। गाव में उस दिन मेला जुडता है। किसी कवि ने ठीक ही कहा था

"शहीदों की चिताओं पर जुडेंगे हर बरस मेले।
वतन पर मरने वालों का, यही बाकी निशा होगा॥

हमीद को श्रद्धाजलि देने के लिए बड़े-बड़े लोग उनके गाव गए। हमीद के चारों बेटे जैनुल हसन, तलद मोहम्मद, मोहम्मद जुनैद और जैनुल अपने बाप की वीरता के कारनामे सुन-सुनकर हैरान थे। उसकी बूढ़ी मा दोनो हाथ उठाकर बोली—मेरा बहादुर बेटा खुदा का प्यारा हो गया। वह अपनी इस छोटी-सी जिन्दगी में ही इतना कुछ कर गया।

उसके बाबा ने कहा—मेरे बेटे की इच्छा थी कि उसके प्यारे बेटे बडे होकर फौज में दाखिल हो जाए। ये दोनो बड़े तो अभी से बेताब हो रहे है। आखिर शेर के बच्चे जो ठहरे।

हमीद का वह गांव इस बहादुर के कारण मानो एक तीर्थ-स्थान बन गया है। लोग वहा जाकर उस गाव की मिट्टी को माथे पर लगाते हैं। हमीद धाम में अब एक स्कूल और एक अस्पताल भी हमीद के स्मारक के रूप में खुल गए है।

हमीद धाम की जय। जहा का लाडला हमीद देश की आन बान के लिए अदम्य शौर्य प्रदर्शित कर और पाकिस्तान के कमीने प्रचार को झुठलाकर तथा भडाफोड़ करके शहीद हो गया।

आज मैदान में दुश्मन भी हौंसला देखे।
उठाई हाथ में संगीन, बांध सर पर कफन ॥
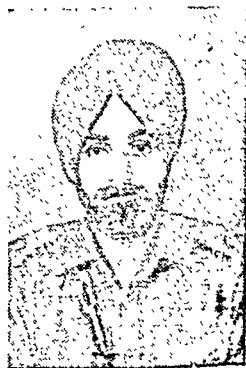
चाविंडा का वीर

मिलिटरी हास्पिटल, नई दिल्ली का आई० डी० वार्ड। इस कक्ष में रखे गए हैं वे घायल जवान, जिनकी हालत अधिक गंभीर है। कतार से पलंग लगे हुए हैं। आज अस्पताल में विशेष सफाई की गई है। घायलों को मरहम-पट्टी करके 'टाइडी' कर दिया गया। शायद कोई विशेष अधिकारी आने वाले हैं। कमरे में सन्नाटा है। उस सन्नाटे में पदचाप स्पष्ट सुनाई पड़ रहे हैं। स्वर्गीय प्रधानमंत्री लालबहादुर शास्त्री के साथ डाक्टरों व सर्जनों ने कमरे में प्रवेश किया। सर्जन ने एक पलंग की ओर इशारा करके धीरे से प्रधानमन्त्री से कहा—सर ये चाविंडा के

हीरो मेजर भूपेन्द्रसिंह हैं। युद्ध क्षेत्र में अपने साथियों को जलती जीप से निकालते समय यह बुरी तरह जल गए थे। दर्द कम महसूस हो इसलिए हमने इन्हें थोड़ी मात्रा में मार्फिया का इंजेक्शन दिया हुआ है।

लालबहादुर शास्त्री जी दबे पांव पलग के पास गए और उन्होंने वीर के घावों को देखा। शरीर पर इतने अधिक घाव थे कि उनपर पट्टी करना भी सभव नही था। शास्त्री जी की आखें भर आईं। खामोशी और घनी हो उठी।

वीर भूपेन्द्र की आखों पर पट्टी बधी हुई थी, क्योंकि वह जलकर फूट गई थी। परन्तु उनकी अन्य ज्ञानेन्द्रिया बड़ी सजग थी। सुबह नर्स की बातचीत से उन्हे पता चल गया था कि आज हमारे प्रधान मन्त्री अस्पताल में आनेवाले हैं। कमरे के सन्नाटे और एक साथ लोगों के पदचाप से वह भाप गए कि प्रधानमंत्री उनके पलंग के पास ही खड़े हैं। सन्नाटा अधिक बोझिल हो गया। भूपेन्द्रसिंह ने उसे तोड़ते हुए कहा—आज हमारे देश के प्रधानमन्त्री यहा पधारे हैं। मुझे अफसोस है कि मैं खड़ा होकर उनका अभिवादन भी नही कर सकता।

प्रधानमन्त्री ने झुककर पूछा—मेजर साहब मैं आपकी बहादुरी की दाद देता हूं। आप जैसे वीरो पर देश को नाज है। बोलिए मैं आपके लिए क्या करूं।

भूपेन्द्रसिंह बोले—जनाब आपसे एक अर्ज है।

इतना कहकर वह कुछ देर चुप हो गए। शायद उन्हें किसी स्नेही की याद हो आई। शास्त्री जी ने सोचा—शायद यह अपनी पत्नी व बच्चों के भविष्य के विषय में निवेदन करना चाहता

है। पर नहीं जो वीर दूसरों के लिए प्राण न्योछावर करने के मौके को एक पर्व की तरह मानकर कर्तव्य करता है, वह क्या अपने लिए सोचेगा। प्रधानमन्त्री ने प्रोत्साहन देते हुए फिर पूछा—हां भूपेन्द्रसिंह कहो, क्या चाहते हो ?

भूपेन्द्रसिंह बोले—जनाब मेरे टैंक का ड्राइवर तथा अन्य (दल के साथियों) के परिवार की परवरिश की जाए। उन्होंने आखिरी वक्त तक अपना फर्ज अदा किया।

धन्य हो वीर ! अपने लिए तो तूने पीड़ा वरदान सदृश मांगी और दूसरों के लिए सुख चाहा। वहां उपस्थित जन समुदाय का मन भूपेन्द्र की उदारता से भीग गया।

वाहर निकलते समय सर्जन ने बताया कि ऐसा जवान मर्द वहादुर सैनिक जो पीड़ा को पी गया हमारे देखने में नहीं आया। हमने इनके मुंह से कभी कोई शिकायत नहीं सुनी। जब भी पूछा यही कहता है—मैं विलकुल ठीक हूं।

सरदार सज्जनसिंह नहर विभाग में इंजीनियर हैं। उनके एक लड़का हुआ था उसके वाद कई वरसों तक कोई सन्तान नहीं हुई। आनन्द साहिव गुरुद्वारा में उनकी पत्नी ने मानता मांगी—गुरु महाराज, एक वेटे की मां हमेशा दुखी रहती है। आप मुझे एक होनहार, यशस्वी वेटा दें यह मेरी अरदास है।

और संयोग देखिए कि उन्हीं दिनों सरदार सज्जनसिंह की वदली आनन्द साहव पुर में ही हो गई। सिखों के इसी तीर्थ स्थान में हमारी कहानी के नायक मे० भूपेन्द्रसिंह का जन्म २ नवम्बर, १९२८ को हुआ। वड़ी खुशियां मनाई गईं। गरीवों

के लिए भंडारा खोल दिया गया। परिवार के एक मित्र पंडित ने गणना करके बताया कि यह बच्चा बड़ा होनहार, यशस्वी और कुल का नाम रोशन करनेवाला होगा। यह तो देवलोक का कोई तपभ्रष्ट क्षत्रिय आपके यहां अपना समय पूरा करने आया है।

मां का माथा ठनका। उसने अपने नन्हे 'भूपी' के दीर्घजीवन के लिए जप-तप करने शुरू किए। भूपेन्द्र जब सात-आठ बरस का था उसका बड़ा भाई १७ बरस की उम्र में ही विदेश पढ़ने चला गया और इंजीनियरिंग पास करके उसने सिलविया नामक एक अंग्रेज महिला से वहीं शादी कर ली।

अब भूपेन्द्र ही परिवार का चिराग था। नौ बरस तक उसकी शिक्षा घर पर ही हुई। फिर जी कड़ा करके माता-पिता ने उसे स्कूल भेजा। जिस तरह वह खेल में तेज में था, उसी तरह पढ़ाई में भी तेज निकला। सरू के पेड़ की तरह लंबा-पतला, फुर्तीला भूपी सबका प्यारा बन गया। जब देश का विभाजन हुआ भूपेन्द्र उस समय जवान था। गवर्नमेंट कालेज लुधियाना से बी० ए० पास कर चुका था। उसे इंजीनियरिंग कालेज में पढ़ने के लिए स्कालरशिप भी मिला। क्योंकि बड़े बेटे ने विलायत में ही स्थायी रूप से घर बसाकर रहने का तय कर लिया था इसलिए भूपी ही माता-पिता के प्रेम व उम्मीदों का आधार बन गया। पिता जी की बड़ी इच्छा थी कि वह उनकी तरह ही इंजीनियर बने। पर भूपी को तो अपना क्षात्र धर्म निभाना था। उन दिनों देश में गड़बड़ चल रही थी। लाहौर की ओर से शरणार्थियों का तांता बंधा हुआ था। भूपी किसी तरह इंजन में ही बैठकर मेरठ तक आया और अपनी मिलिटरी

की इंटरव्यू देकर चला गया। भूपेन्द्रसिंह के प्रभावशाली व्यक्तित्व को देखकर इंटरव्यू में बैठे एक अधिकारी ने कहा था– यह सवा ६ फुट का निडर सिख जवान आगे जाकर भारतीय सेना का गौरव बढ़ाएगा। १९५० में देहरादून में ट्रेनिंग खत्म हुई। जब परिणाम निकला तो उसका स्थान २०० कैडेट में चौथा था। ससम्मान अपनी ट्रेनिंग समाप्त कर भूपेन्द्रसिंह ने हडसन हौर्स रेजिमेंट ज्वाइन की। उस समय उनकी उम्र कुल २१ बरस की थी।

अपने जवानों के बीच वे बड़े लोकप्रिय थे। सभी तरह के खेल खेलते थे। मिलिटरी एकाडमी में उन्होंने चार ब्लू जीते थे। टीप स्प्रीट बड़ी थी। कभी थी जीत का श्रेय खुद नहीं लेना चाहते थे। उनके अन्य शौक थे—बागबानी, अच्छी-अच्छी मूर्तियां तथा पुस्तकों का संग्रह।

सरदार सज्जनसिंह के एक मित्र सरदार एच० डी० सिंह रेलवे में इंजीनियर थे। उनकी बड़ी लड़की सुरेन्द्रकौर थी। भूपी की मां की बड़ी इच्छा हुई कि सोहिन्दर कौर को अपनी बहू बनाकर लाऊं। उन्होंने एक दिन बेटे से बात छेड़ी—बेटा भूपी, अब तो तुझे कमीशन भी मिल गया है। मैंने तेरे लिए एक लड़की देखी हुई है। बड़े अच्छे घर की, एफ० ए० पास लड़की है। तू हां कर दे तो तेरा ब्याह रचा दूं।

—मां, तुम कैसी बातें करती हो। मुझे अभी कुल साड़े तीन सौ रु० तनख्वाह मिलती है। शादी करके गुजारा कैसे हो सकेगा। फिर मेरी उम्र भी तो अभी कुल २१ की है। मिलटरी

में २५ से पहले अपनी पत्नी साथ रखने की सुविधा नहीं मिलती।

मा ने चिरौरी करते हुए कहा—अच्छा, तेरा बड़ा भाई विलायत में ही जा टिका। हम अब बूढ़े हो गए। बहू व पोते-पोतियों का मुंह देखने के लिए तरस गए है। खर्च की तू फिक्र मत कर। सारी जिम्मेदारी हमारे सर पर रहेगी।

बस जी, होनहार थी। भूपेन्द्र ने सोहिन्दर को देखा। उसकी बड़ी-बड़ी स्वप्निल आखों मे उसे अपने कवि-हृदय की सारी कल्पना सजीव होती दिखाई पड़ी। प्रथम दर्शन मे ही दिल मचलता प्रतीत हुआ। विवाह हो गया। किशोर दम्पति प्रेम की दुनियां में खो गए। जब वास्तविकता के धरातल पर पाव टिके तो भूपी ने पत्नी से कहा—प्रिय, मेरी बडी इच्छा है कि तुम, अपनी पढ़ाई चालू रखो।

सोहिन्दर ने मुस्करा कर कहा—अच्छा, तो क्या मैंने इसी लिए विवाह किया था कि फिर से विद्यार्थी जीवन बिताना पड़े।

—नही सोहिन्दर, इन्सान जब तक जीता है सारी उम्र सीखता है। सीखना और तरक्की करना ही तो जीवन है। मैं तो अधिक समय अपने कोर्स पर ही रहूगा। इस बीच तुम अपनी पढ़ाई करती रहना।

नवोढा पत्नी ने पूछा तो क्या हमें साथ रहने का मौका नही मिलेगा ?

भूपेन्द्र ने धीरे से उसकी गाल पर थपकी देकर कहा—तू क्या समझती है कि जुदाई तुझे ही खलेगी, मुझे नही ? अजी ग्म पर हमारे कर्नल साहब बड़े मेहरबान है। उन्होने कह दिया

है कि तुम अपनी मुमताज को लेकर हमारे यहां रह जाना।

कुछ साल इसी तरह सुख से बीत गए। उनका दाम्पत्य प्रेम फला, फूला, विश्वास की भूमि पर पनपा। एक दूसरे को समझने की, आत्मसात् होने की, प्रेरणा मिली। जीवन की सुनहली घड़ियां सर पर पांव धर कर भागती नजर आने लगीं। एक के बाद एक तीन लड़कियां हो गईं।—रूपेन्द्र, मनीन्द्र, तथा नवनीत। भूपेन्द्र को अपने बच्चों से बड़ा प्यार था। पत्नी जब भी कहती कि काश इनमें से एक लड़का होता तो भूपेन्द्र प्यार से झिड़क कर टोक देता—ऐसा क्यों कहती हो। मुझे तो लड़कियां लड़कों से अधिक प्यारी हैं। हमारे खानदान में तो तीन पुश्तों के बाद बेटियां पैदा हुई हैं। ये तो घर की लक्ष्मी हैं। मैं सोहिन्दर अपनी बड़ी लड़की को तो डाक्टर बनाऊंगा।

सोहिन्दर जी ने मुझे बताया कि जब पाक ने हमला किया तो मेरे पति की रेजिमेण्ट दिल्ली में ही थी। वे बड़े उतवाले हो उठे फ्रण्ट में जाने के लिए। मुझे चिन्तित देखते तो कहते—देखो सोहिन्दर जब तक सिपाही युद्ध-मोर्चे पर नहीं जाता, युद्ध का अनुभव उसे नहीं होता, शत्रु को करारी शिकस्त नहीं देता, वह सच्चा बहादुर सिपाही कहलाने का अधिकारी नहीं हो सकता।

एक दिन आफिस से बड़े खुश-खुश लौटे। मैंने पूछा—क्यों क्या बात है, क्या कुछ तरक्की मिल गई है? बस गालिब का एक शेर पढ़ कर सुना दिया। जिसका अर्थ था कि बहुत दिनों से जिस बात की तमन्ना थी वह पूरी होती नजर आ रही है। वे तो उर्दू-साहित्य के बड़े प्रेमी थे। बात-बात पर शेर पढ़ा करते

थे। बड़ी रंगीन तबियत पाई थी। अपने आप को किसी शहंशाह से कम नहीं समझते थे। भगवान ने चोला भी ऐसा शानदार दिया था कि जहा खड़े होते धरती सज जाती। ६ फुट ३॥ इंच ऊंचाई, ४५ इंच चौड़ा सीना, २७ इंच कमर। फौलादी जिस्म। पर पांव इतने कोमल, छोटे और सुडौल कि ताज्जुब होता था। जब कभी वह नंगे पांव फर्श पर चलते तो ऐसा लगता मानो फूल बिखरते जा रहे हैं। अपने यूनिफार्म में जब निकलते तो मालूम होता स्वप्न लोक का कोई शहजादा धरती पर उतर आया है।

मैं अपने को अहोभाग्य समझती थी ऐसा पति पाने के लिए। बच्चों को भी अपने बाप पर बड़ा नाज था। वह भी उनके बड़े लाड़ लड़ाते थे। बीच वाली लड़की मनीन्द्र तो रात को उनके संग ही खाना खाने का इंतजार करती। पर उन्हें लौटने मे बड़ी देर हो जाया करती। इसलिए उन्होंने बेटी से कह रखा था कि तू खाना खा लिया कर। पर दूध का गिलास मैं तुझे अपने हाथ से पिला दिया करूंगा। कई बार ऐसा होता कि उसे रात को सोई पड़ी मे दूध पिला दिया, पर सुबह उठ कर वह उलाहना देती—डैडी आपने हमें दूध नहीं पिलाया था। हम इंतजार कर-करके सो गए थे।

वे अपने बच्चों की पढाई, स्वास्थ्य और चरित्र विकास में बहुत दिलचस्पी लेते थे। उनमें खेलकूद का शौक पैदा किया था। उनका पारिवारिक जीवन इतना पूर्ण था कि बच्चों के लिए आदर्श बन गया था। सोहिन्दर जी ने मुझे बताया कि बच्चों के सामने ही वह मुझे प्यारे-प्यारे नामों से पुकारते, मेरी

प्रशंसा करते तो मैं कहती—अब बच्चे बड़े हो गए हैं, मेरे प्रति तुम्हारा ऐसा प्रेमभाव और दुलार देखकर तो वे क्या सोचें ? तो कहते—वाह ! यह तो उनके आगे एक अच्छा उदाहरण है सुखद प्रेमालु पारिवारिक जीवन कैसे बिताना चाहिए।

एक चिट्ठी उन्होंने अपनी बीच वाली लड़की को लिखी थी, जिसमें उनके ममतामय पितृ हृदय की झांकी है।

'प्यारी बेटी मिन्नी, ढेर सा प्यार।

मैंने ट्रंक काल की थी उस समय तुम स्कूल गई हुईं थीं। तुम्हारे लिए कुछ टाफी, चाकलेट और पनीर के डिब्बे भेज रहा हूं।

तुम्हारे पांव का अंगूठा अब कैसा है ? अगर दुखे तो मम्मी को जरूर बता देना, नहीं तो तकलीफ बढ़ जाएगी।

बच्चा, खूब मेहनत कर के अच्छे नम्बरों से पास होना।

अपनी मम्मी का कहना मानना। वे बहुत अच्छी हैं। हमारे परिवार की प्राण और धुरी हैं। उनको मेरी ओर से तुम प्यार करना और कान में धीरे से कहना यह पापा के हिस्से का प्यार है मम्मी।

सप्रेम तुम्हारा
पापा

बातें करते-करते सोहिन्दर जी मानो फिर अपने जीवन के अतीत में खो गईं। उनके स्मृति-पट पर भूले-बिसरे चित्र उभरते रहे। मैं उनके मुंह की ओर देखते हुए चुपचाप सोचती बैठी रही कि हे भगवान अपने स्मृति-लोक में यह वियोगिनी मुमताज प्यारी-प्यारी यादों का ताजमहल अपने शहंशाह के लिए

अ ाखिरी सांस तक बनाती रहेगी। दाम्पत्य जीवन का अब यही तो शेष रह गया है। अपने बच्चों में उनके पिता की रूप-भाकी, स्वभाव, आदतो आदि की झलक देखकर इन्हें कितनी उनकी याद आती होगी!

कुछ देर बाद सोहिन्दर जी को मेरी उपस्थिति का अहसास हुआ और वह अपने आसुओ को पीती हुई बोली—बहन, वह कितने अच्छे थे इसका बयान करना कठिन है। भगवान ने जैसी उन्हे सुडोल काया दी थी वैसा ही सुन्दर स्वभाव भी दिया था। कभी किसी का जी उन्होंने नही दुखाया था। जिन्दगी का हर लहमा उन्होंने बड़े शान के साथ जीया। समय को उन्होंने चोटी से पकड़ा। निश्चय लेने मे उन्हें देर नही लगती थी।

उनकी आदतें बडी साफ-सुथरी थी। उसकी व्यवस्था-प्रियता तो बस क्लासिक ही समझिए। उनका कमरा अलग था। अगर उनका पेन, डायरी या दवात कोई उठा कर मेज पर इधर से उधर रख देता तो वे फट उलाहना देते। घर में सब को तकाजा करते कि काम 'सिस्टेमेटिकली' करना चाहिए। इससे काम जल्द होता है, और समय की बचत होती है।

मैंने देखा बात मुख्य धारा से अलग हो रही है। बीच मे ही टोककर मैंने पूछा—हा सोहिन्दर जी फिर उस दिन क्या खुश खबरी लेकर आए थे वे?

सोहिन्दर जी ने एक लम्बी सास खीचकर कहा—बहन, उनकी कहानी तो कभी समाप्त होनेवाली नही। अब उनके प्यार को ही याद करके मैं जी रही हूं। उस दिन आकर बोले, सोहिन्दर संभव है मैं अगले हफ्ते फ्रन्ट पर चला जाऊ। कल

पूनम है। चलो, आगरा चक्कर लगा आएं।

मैं समझ गई कि अपने स्वभाव के मुताबिक ये कड़ी खबर को भी नर्म बनाकर ही बता रहे हैं। अब ये जल्द सीमा पर जानें ही वाले हैं। खैर दूसरे दिन हम लोग आगरे पहुंचे। यहां से साथ में एक फोटोग्राफर भी ले गए। वहां जाकर ताज की पृष्ठभूमि में हमने कई फोटो खिचवाई। ताज दिखाकर मुझे बोले—डार्लिंग, तुम मेरी मुमताज हो। पर अफसोस है कि मैं अपने प्रेम की याद में ताज बनाकर कोई सबूत न दे सकूंगा। किसी शायर ने कितनी सही बात कही है—

इक शहंशाह ने दौलत का सहारा लेकर।
हम गरीबों की मुहब्बत का उड़ाया है मज़ाक।।

उनके कंधे पर सर टेककर मैंने कहा तुम तो मेरे सरताज हो। काश ! मैं तुम्हारी गोद में सर रखकर, इसी प्रकार सपने देखते हुए सदा के लिए आंखें मूंद लेती।

उन्होंने मेरे सर को सहलाते हुए कहा—सोहिन्दर, ऐसी बात कभी मत कहना। तुम्हें बहुत दिन जीना है। मेरे बच्चों को मेरे सपनों के अनुसार योग्य बनाना है। मेरे जैसे सिपाही की जगह तो युद्ध क्षेत्र में है और इस बात को मत भूलो कि देश पर न्योछावर होनेवाले परवाने सर पर कफन बांधकर ही युद्ध क्षेत्र में उभरते हैं।

बात गंभीर हो चली थी। इसलिए उन्होंने शेर सुनाने शुरू किए। उनकी यह खूबी थी कि कोई भी भाषा वह जल्दी सीख लेते थे। जब दक्षिण में थे तो टूटी-फूटी तमिल बोलने लग गए थे। बंगाल में जब उनकी पोस्टिंग हुई तो अच्छी-खासी बंगाली

सीख गए। काजी नजरूल की गजलों से उन्हें विशेष प्रेम था। उर्दू भाषा पर तो वे फिदा थे। शेर-शायरी में खुद भी अच्छा दखल रखते थे। गालिब और शाहिर लुधियानवी की अनेक गजलें व शेर उन्हें कंठस्थ थे। कव्वाली के भी बड़े शौकीन थे। बड़ा इश्कियाना मिजाज पाया था उन्होंने। खुद कहा करते थे कि सोहिन्दर जब मैं सुबह उठा करू तो तुम मेरे शयन-कक्ष में सितार बजाती रहा करो।

इस पर मैं कहती—तुम्हें तो मुगलों के समय में पैदा होना था। क्या बादशाही तबियत पाई है।

वे ईमान की अपेक्षा इन्सान को अधिक प्रेम करते थे। सब के दुःख-सुख के साथी थे। एक बार की बात है, अहमद नगर में पोस्टेड थे। एक मुसलमान जमादारिन हमारे यहा काम करती थी। एक बार उसने जुड़वे बच्चों को जन्म दिया। जब शाम को भूपी आफिस से आए और उन्हें मैंने बताया कि जमादारिन को खून की जरूरत है। बेचारी गरीब अस्पताल में पड़ी सिसक रही है। यह सुनकर व उल्टे पाव अस्पताल पहुंच गए और डाक्टर से बोले आप मेरा खून जमादारिन को दे दें। क्योंकि मेरा ब्लड ग्रुप 'युनिवर्सल है।

जब जमादारिन अच्छी होकर काम पर आई तो भूपी ने उससे कहा—क्यों जमादारिन, अब तो मेरा खून तेरी नसों में है। सो हमारा तुम्हारा खून का रिश्ता हो गया न ?

जमादारिन ने दस बार दुआ देते हुए कहा—साहब, खुदा आपके बच्चों को लम्बी उम्र दे। मेमसाहब और आपका जोड़ा बना रहे। आपकी मेहरबानी से मैं बच गई।

सोहिन्दर जी ने बताया कि आखिर को विदाई की वेला आ ही गई। जाते हुए मुझे बोले——घबड़ाना नहीं। तुमने इस साल एम० ए० भी कर लिया इसकी मुझे बड़ी खुशी है। भगवान पर भरोसा रखो।

उनकी खुशी और उत्साह देखकर मैं अपने मन की कुछ व्यथा भी न कह सकी। मैं अपनी दुर्बलता प्रकट होने देना नहीं चाहती थी। क्योंकि वह हमेशा कहा करते थे कि किसी बहादुर को शक्ति तो उसकी पत्नी से प्राप्त होती है। मैंने जाते समय हाथ जोड़कर सतश्री अकाल कहा और अपने आंसू छिपाने के लिए अपना मुंह अपनी छोटी बेटी की ओट में जो कि मेरी गोद में थी, छिपा लिया। जितनी दूर तक हम दिखाई पड़ते रहे भूपी बराबर मुस्कराकर हाथ हिलाते रहे।

चाविंडा क्षेत्र में युद्ध का मैदान। धुआं भरा आकाश। पाक विमान आकर अन्धाधुंध बमवर्षा कर गए थे। उनकी फौज हडसन हौर्स रेजिमेंट से बुरी तरह शिकस्त खाकर पीछे हट गई थी। १४ दिन के घमासान युद्ध के चिह्न चारों ओर भारतीय सेना की वीरता की कहानी कह रहे थे। पाक सेना के ध्वस्त पैटन टैंक इधर-उधर बिखरे पड़े थे। भयंकर तबाही मचने के बाद, तूफान के बादका-सा सन्नाटा छाया हुआ था। पाक सेना दूर तक खदेड़ दी गई थी पर उनके हवाई जहाज़ बीच-बीच में आकर बम गिरा जाते थे। पाक विमानों को आते देखकर भारतीय जवानों ने खाइयों में शरण ली। हमारे भी कई टैंक बेकार हो गए थे। केवल चार टैंकों को लेकर मेजर भूपेन्द्रसिंह ने आगे बढ़ने का

हुक्म दिया। क्रू के कुछ व्यक्तियों ने कहा—मेजर साहब, हमारे टैंक में आज सुबह आग लग जाने के कारण कुछ गड़बड़ी हो गई है। ऐसी सूरत में आगे जाकर भी हम क्या कर सकते है ?

मूर्ख ! मेजर ने कडक कर कहा—तोप और टैंक युद्ध नहीं लड़ा करते। युद्ध तो बहादुर जवानों के हौसलों पर लड़ा जाता है। तुम लोग मेरे पीछे-पीछे आओ।

टैंक आगे बढ़ गए। और अधिक दूर तक शत्रु को खदेड़ दिया गया। दूसरे दिन फिर मार्च का हुक्म हुआ। कुछ दूर जाने पर तोपची ने बताया कि बारूद-गोला खत्म हो गया है। मेजर भूपेन्द्र सिंह ने इधर-उधर ताका। दूर पर उन्हे दो-चार बेकार हुए टैंक नजर आए। वे लपक कर गए और उन टैंकों में से काफी गोला-बारूद उठा लाए। उस दिन भी विजय उनके हाथ लगी।

चाविंडा की लड़ाई इतिहास में स्वर्ण अक्षरों में लिखी जाएगी। चौदह दिन तक भयंकर युद्ध हुआ था। चाविंडा फतह कर लिया गया था। पर चाविंडा के वीर मे० भूपेन्द्रसिंह को चैन नही थी। उत्तेजना, जीती हुई चौकियों पर कब्जा, अपने साथियों की चिन्ता, अपने साथियो की फिक्र इन सब ने मिलकर भूपेन्द्र का न केवल मानस ही परन्तु पेट भी मथ डाला था। नीद व भोजन के अभाव उनके पेट में अल्सर हो गए थे। पर इसकी उन्हें सुध नही थी। फिक्र इस बात की थी कि जो हिस्सा हमने जीता है उस पर शत्रु हमला करके कही फिर कब्जा न कर ले। भारतीय सेना भी इन १४ दिन के युद्ध में बहुत कुछ खो चुकी थी। वीरों का बलिदान तथा अपने सीमित तोपखाने की फिक्र सभी कुछ

भूपेन्द्र को साल रही थी अभी पीछे से नई कुमुक नहीं पहुंची थी। वे रात खाइयों में गुज़ारते और दिन में अपने चार टैंकों को लेकर गश्त करते। एक दिन गश्त पर वह आगे जा रहे थे कि शत्रु के हवाई जहाज़ों की नज़र इन पर पड़ गई। उन्होंने एक चील झपट्टा-सा मारा और बम गिराते हुए चक्कर काटकर लौट गए। दुर्भाग्य से एक बम भूपेन्द्र के टैंक पर पड़ा। गिरते ही उसकी लपटें फैल गईं। भूपेन्द्र लम्बा होने के कारण फट से कूद कर बाहर निकल गया। चारों ओर सुरमई धुआं छा गया। टैंक लपटों से ढक गया। इतने में भूपेन्द्र को सुनाई पड़ा कि जीप के अन्दर से धर्मसिंह (क्रू मैन) चीखकर पुकार रहा है---साहब हमें बचाओ, बचाओ।

भूपेन्द्र लपककर आया। उसने धर्मसिंह तथा उसके एक साथी को खींचकर बाहर किया। फिर ड्राइवर को बाहर खींचने की उसने कोशिश की, पर बार-बार चेष्टा करने पर भी वह वह मानो वहां अटका रहा। ड्राइवर ने कराहते हुए कहा--साहब मेरी बैल्ट हुक में फंस गई है।

बम के विस्फोटक पदार्थों से युक्त लपटों ने भूपेन्द्रसिंह को घेर लिया। उनकी पोशाक (यूनिफार्म) जल गई। आंखें इतनी झुलस गई कि एक तो फूटकर बाहर लटक गई। झुलसने के कारण पीठ व जंघा का मांस जलकर लटक गया। दोनों हाथों पर से मांस के लोथड़े झूल गए। लाख कोशिश करने पर भी वह ड्राइवर को नहीं बचा सके। धर्मसिंह तथा अन्य साथी फर्श पर बेहोश पड़े थे। मेजर भूपेन्द्रसिंह को रास्ता नहीं सूझ रहा था। कैसे अपने साथियों को बचाए, किस प्रकार मेडिकल

एड प्राप्त की जाए ?

उस धुएं से भरे वातावरण में, जहां दूर पर सियार रो रहे थे और कौवे व चील मंडरा रहे थे, एक आवाज गूंजी—वह आवाज जो कि अपनी टुकड़ी को हुक्म देने की आदी थी। वह आवाज जिन्हें सुनकर शत्रु दहल जाते थे, साफ सुनाई पड़ी—"कोई है ? इधर आओ। मैं मेजर भूपेन्द्रसिंह बोल रहा हूं। मेरे साथी घायल पड़े हैं। मुझे रास्ता नहीं सूझता। जल्दी मदद के लिए पहुंचो।"

जब कोई नहीं आया तो मेजर भूपेन्द्रसिंह अन्दाजन कदम धरते हुए एक फर्लांग तक अपनी खाइयों की ओर आए। उनका शरीर सारा झुलसा हुआ था। शरीर पर केवल एक कच्छा व बनियान रह गए थे। खाइयों में से कुछ भारतीयों ने सर उठाकर देखा पर वे भूपेन्द्रसिंह को पहचान नहीं सके। उन्होंने उन्हें शत्रु का कोई भेदिया समझा और ललकार कर रुक जाने को कहा। एक बार फिर भूपेन्द्रसिंह ने जोर की आवाज लगाई—तुम मुझे पहचानते नहीं ? मैं भूपेन्द्रसिंह हूं।

खाइयों में दुबके जवानों ने यह आवाज फिल्लौरा के युद्ध-क्षेत्र में सुनी हुई थी। जब ले० क० तारापोर की मदद के लिए हडसन होर्स रेजिमेंट पहुंची थी तो उसका सफल नेतृत्व भी मेजर भूपेन्द्रसिंह ने ही किया था। उस युद्ध में उनकी वीरता की भूरि-भूरि प्रशंसा की गई थी। शत्रु पर हडसन होर्स और उसके सवा छः फुट मेजर की धाक छा गई थी। उस आवाज को पहचानने में सैनिकों को देर नहीं लगी। खाइयों में से जवान कूद-

कूद कर वाहर आ गए। अपने प्यारे मेजर की ऐसी हालत देख-कर उन्हें संभालना चाहा। पर वाह रे इन्सानियत के अवतार। भूपेन्द्रसिंह ने फौरन कहा—देखो, मेरे साथी मेरे टैंक के पास बेहोश पड़े हैं। तुम पहले उन्हें उठाकर ले चलो। मैं तो किसी-का हाथ पकड़कर भी चल सकता हूं।

मेजर भूपेन्द्रसिंह स्वभाव से ही मधुर, पर दृढ़निश्चयी और निडर थे। दुर्बलता और कायरता से उन्हें नफरत थी। सोहिन्दर कौर जी ने मुझे बताया—क्योंकि मुझे उनकी आदतें पता थीं, इसलिए मुझे यह डर था कि युद्ध के मैदान में वह एक शेर की तरह गरजेंगे। खतरे में वह डटे रहेंगे। अपने देश और साथियों की रक्षा के लिए वे प्राण हथेली पर रखकर विपत्ति से जूझेंगे। यही हुआ। वे तो जीप पर से सही-सलामती कूदकर निकल आए थे पर अपने साथियों को बचाने में उन्होंने अपनी जान लड़ा दी। जब उन्हें रेड क्रास कैम्प में ले जाकर पलंग पर लेटने को कहा गया था तो बोले—मैं बैठकर ही ड्रेसिंग करवा लूंगा। मेरे साथी कराह रहे हैं। मुझे लेटा देखकर उनकी हिम्मत टूट जाएगी।

भूपी बुरी तरह से जल गए थे। डाक्टरों ने उन्हें पठानकोट के अस्पताल ज दिया पर उनके जख्म देखकर वहां के डाक्टरों ने उन्हें दूसरे दिन ही दिल्ली रवाना किया। भूपेन्द्रसिंह के ज़िद करने पर उनके घायल साथी भी उनके साथ ही दिल्ली भेज दिए गए।

दिल्ली मिलिटरी हस्पताल में सोहिन्दर जी ने घायलों की सेवा का काम ले लिया था। एक दिन वह एक नर्स से बोली—अच्छा हुआ मेरी ड्यूटी इस आई० टी० वार्ड में लगी है। यदि मेरे पति घायल होकर यहां आएं तो मुझे उनकी सेवा करने का मौका तो मिलेगा।

नर्स ने बरजते हुए कहा—ऐसी अशुभ बात क्यों सोचती है आप ? ईश्वर करे, आपके पति विजय प्राप्त करके सकुशल लौट आए।

वे बड़े हठी हैं। प्राण रहते वे देश की एक इंच भूमि भी नहीं लेने देंगे। न ही उन्हें कोई कैदी ही बना सकेगा। हां, घायल होकर यदि लाचार हो गए तो दूसरी बात है।

वही बात हुई। १६ सितम्बर को वे घायल हुए। तारीख २१ सितम्बर को रात के दो बजे भूपेन्द्रसिंह दिल्ली मिलिटरी अस्पताल में लाए गए। उन्होंने अपने वार्ड की नर्स से कहा—नर्स मेरी पत्नी मिसेज पार्क में रहती हैं। मेरे घायल होने की उन्हें कोई 'अलार्मिक न्यूज' मत देना। वह घबड़ा जाएगी।

पर नर्स तो जानती थी कि मिसेज भूपेन्द्रसिंह से उनके पति की हालत छिपाई नहीं जा सकती। इसलिए दूसरे दिन सुबह साढ़े आठ बजे उन्होंने सोहिन्दर कौर को फोन किया—आपके पति आई० टी० वार्ड में रात दाखिल हुए हैं।

समाचार पाते ही सोहिन्दर जी अपने माता-पिता के साथ वहां पहुंच गईं। वार्ड में घायलों को पट्टी आदि बंधी होने के कारण पहचानना कठिन था। फिर भूपेन्द्र जी तो अधिक जल कर स्याह हो गए थे और उनकी आंखें जल जाने के कारण सील

कर दी गई थीं। इस कारण उन्हें तुरन्त पहचान लेना संभव नहीं था। मिसेज़ सोहिन्दर ने बताया कि मैंने उन्हें उनके सुन्दर पांवों और लंबे कद के कारण पहचाना। असाधारण लंबाई के कारण उनके पांव पलंग से बाहर निकले हुए थे। उनकी बांहों को टेकने के लिए पलंग के दोनों ओर दो मेज़ें जोड़ी गई थीं। शास्त्री जी जब अस्पताल में घायल सैनिकों को देखने गए थे तो उन्होंने अपने भाषण में ठीक ही कहा था—मैंने उनके चेहरे पर आंसू नहीं, पर विजय-गर्व की मुसकराहट देखी। भूपेन्द्रसिंह का देखकर तो सब कोई द्रवित हो गए थे और उन्होंने कहा था कि मेजर भूपेन्द्र का शरीर शत्रु के आक्रमण से इतना क्षत-विक्षत हो गया है कि उनके शरीर के किसी भी अंग पर वस्त्र नहीं पहनाया जा सकता। तब भी इस वीर सैनिक ने इस बात पर लज्जा अनुभव की कि मैं अपने देश के प्रधान मन्त्री का खड़े होकर स्वागत नहीं कर सका।

श्री भूपेन्द्रसिंह ने प्रधान मन्त्री को बताया किउसने सात पाकिस्तानी टैंक नष्ट किए। चाविंडा के युद्ध में तारीख १६ सितम्बर तक शत्रु के ७८ टैंक नष्ट हुए या पकड़े गए। इस तरह उनकी रेजिमेंट ने एक रिकार्ड स्थापित कर दिया।

सोहिन्दर ने एक उसांस लेकर कहा—हाय! अब न तो मेरे सरताज ही रहे और न ही उनका हाल पूछनेवाले हमारे वे प्रिय प्रधान मंत्री लालबहादुर ही रहे। रह गई केवल वीरता की एक कहानी जिसका अन्तिम अध्याय लिखकर भारत का लाल भी सिधार गया।

हमारी बातचीत ऐसे मार्मिक स्थल पर आकर कुछ देर के

लिए रुक गई। सोहिन्दर जी ने अपनी नम आंखों को धीरे से अपनी काली ओढ़नी के छोर से पोंछा। उठकर वह अन्दर गई। लौटकर एक लिफाफा उन्होंने मेरे हाथ में थमा दिया। उन्होंने बताया--भूपी उन्हें रोज एक पत्र लिखते थे। यह उनका अन्तिम पत्र है जो कि उन्होंने किसी मित्र को एक लिफाफे में धरकर भेजा था और यह ताकीद कर दी कि यदि मुझे कुछ हो जाए तो मेरी मृत्यु के दस दिन बाद यह पत्र मेरी पत्नी को भेज देना। इसीके साथ जो दूसरा पत्र है वह मेरे बाबूजी को भेज दिया जाए।

पत्र मैंने पढा। बड़ा ही मार्मिक था। प्यार से भूपी सोहिन्दर को नाज कहा करते थे और सोहिन्दर जी उन्हे चांद कहकर बुलाती थी। यह पत्र उनके दाम्पत्य प्रेम की एक सुन्दर झांकी प्रस्तुत करता है—

"नाज, मेरी प्रियतमा,

अनेक स्नेह चुम्बन।

"जब तुम्हें यह पत्र मिलेगा तुम दुःख-सागर में डूबी होगी। ऐसा दु.ख जिसमें तुम्हे देखना मेरे लिए असहनीय होता। पर क्या करूं, भाग्य की विडम्बना। प्रिये, विश्वास रखो शरीर से दूर होकर भी आत्मा से मैं हमेशा तुम्हारे पास रहूंगा। मेरी आत्मा तुमसे प्राप्त प्रेम, सम्मान तथा दुलार से तृप्त हो गई। तुम्हारी ये सुखद नियामतें मुझे याद रहेंगी। प्रिये, तुमने मुझे इतना कुछ दिया कि मेरी जिन्दगी उसे पाकर सर्वदा पूर्ण बनी रही, अफसोस है चाहते हुए भी, उसके बदले में मैं तुम्हें बहुत थोड़ा देने में समर्थ हो पाया।

"प्रिये, मेरी एक अन्तिम प्रार्थना और स्वीकार करना। मेरे कारण तुम इस दुख को हिम्मत से सह जाना ताकि जो काम मैं अधूरा छोड़ आया हूं, तुम उसे पूरा कर सको। बच्चों को मेरे सपने के मुताबिक बनाना। हिम्मत रखो प्रिय। मैंने तुम्हें हमेशा साहसी पाया है। मेरी आत्मा तुम्हें हमेशा बल देगी। मैं तुम्हारे और बच्चों के लिए दुआ करूंगा। ये बच्चे हमारे प्रेम की निशानी हैं। अब तुम्हें उन्हें एक पिता बनकर भी संभालना होगा।

"मैंने बाबूजी को भी लिख दिया है कि अब वह तुम्हें अपना भूपी समझें। तुम सूझ-बूझ से अपना तथा बच्चों के भविष्य के निर्माण के मामले में निर्णय लोगी, ऐसा मुझे पूरा भरोसा है।

"अब जब-जब भी तुम्हारा और बच्चों का जन्म-दिवस आए अपने चांद तथा बच्चों के पापा की ओर से प्रेमोपहार खरीदना न भूलना।

"प्रियतमा, मेरी आत्मा तुममें ही समाई रहेगी। मेरा अन्तिम प्यार, तथा दुआएं सबके लिए।

तुम्हारा चांद"

पत्र पढ़कर मेरा मानस भीग गया। एक प्रिय जोड़ा बिछुड़ गया। पर अब की बार शाहजहां छोड़ गया अपनी मुमताज को। पुरुष समाज का गौरव भूपी न केवल एक बहादुर सैनिक ही था अपितु एक प्रेमी पति भी साबित हुआ। सोहिन्दर जी ने मुझे बताया—बहन, मैं उनके प्रेम की थाह नहीं पा सकती इतना गहरा था वह। मेरे सास-ससुर ज़रा पुराने ख्यालात के हैं, पर

उन्होंने उन्हें लिखा—बापू जी, हम आपके बच्चे है। अब तक जो कुछ आप कहते रहे सर झुका कर मैं उस हुक्म को बजाता रहा। अब मेरी आपसे यह अर्ज है कि सोहिन्दर तथा अपने बच्चों के भविष्य के विषय में मैं जो अनुरोध करने जा रहा हूं उसे आप मान लें।

सोहिन्दर एक पढ़ी-लिखी स्त्री है। सिपाही का जीवन हमेशा जोखिम का होता है, यही सोचकर मैंने उसे एम० ए० तक पढ़ा दिया था। मैं नही चाहूगा कि वह एक दुःखी विधवा की तरह घर मे बद रहकर रोती हुई अपना जिन्दगी बिताए। उसे नौकरी करने दीजिएगा। वह व्यस्त रहेगी तो दुख भी भूल सकेगी और उसे यह सन्तोष होगा कि वह उपयोगी जीवन बिता रही है और बच्चों का भविष्य सवारने का जो जिम्मा मैं उसपर छोड़ गया हू उसे वह भरसक निभा रही है। अब उसे आप अपनी बहू नही, बेटा समझें।

सोहिन्दर ने मुझे बताया कि उस पत्र का बहुत ही सन्तोष-जनक प्रभाव हुआ। आम पति अपने जीवन में ही पत्नी के सुख की परवाह करते हैं या बहुत हुआ तो आर्थिक सुरक्षा का प्रबन्ध कर जाते है। परन्तु मेरे पति को उनके बाद मेरा समाज मे क्या होगा इसकी भी चिन्ता थी और वह मेरी भविष्य की अड़चनो को भी दूर कर गए। उनकी माता जी ७० बरस की है। उन्हें ठीक से दिखाई भी नही देता। जब वह बेटे को अस्पताल में देखने आई तो उसकी करारी आवाज सुनकर उन्हें यही विश्वास हुआ कि वह शीघ्र ही भला-चगा हो जाएगा। उन्हे

अब भी कभी-कभी यह ख्याल आ जाता है कि मेरा भूपी जीता है। इस नियामत को भगवान मुझसे नहीं छीनेगा। वे जब भी किसी लंबे-ऊंचे सिख जवान को मिलिटरी ड्रेस में देखती हैं तो उसे चिपकाकर रो पड़ती हैं और कहती हैं—आ गया भूपी तू?

भूपेन्द्र के तीन आपरेशन हुए। वे रोज़ ही मुझे अखबार पढ़कर सुनाने को कहते थे। जिस दिन युद्धविराम की घोषणा हुई वे यह समाचार सुनकर उत्तेजित हो गए। डाक्टर ने मुझे इशारे से चुप रहने को कहा! भूपेन्द्रसिंह अन्तिम समय तक यही कहते रहे कि युद्धविराम पाकिस्तान की नीयत को समझकर ही करना उचित होगा। युद्धविराम घोषणा के बाद यदि वह सीमा पर हमला करके हमारी जीती हुई चौकियों पर कब्ज़ा करने लगेगा तो शहीदों की आत्माओं को बड़ा कष्ट होगा।

घायल होकर भी अस्पताल में वह हरदम युद्ध के विषय में ही चिन्तित रहते थे। अपने सहयोगी अफसरों से हमेशा युद्ध के मोर्चे की बात ही करते थे। उन्हें बिठाकर सारी कहानी बताते थे कि फिल्लारा व चाविंडा के मोर्चों का युद्ध कैसे हुआ। हमारी रेजिमेण्ट ने वहां कहां पोज़ीशन ली थी और शत्रु का किस प्रकार मुकाबला किया। वे बार-बार यही कहते कि मैं जब नहीं रहूं तब भी मेरी रेजिमेंट के जो सैनिक बहादुरी से लड़े थे उनको भुला न दिया जाए। अपने से भी अधिक उन्हें अपने साथियों की फिक्र रहती थी।

भूपेन्द्रसिंह इतनी बुरी तरह जल गए थे कि घाव भरने को नहीं आ रहे थे। डाक्टर और सर्जन उनकी सहनशक्ति पर

आश्चर्य करते थे। उन्हें खून चढ़ाया जाता था परन्तु शरीर में नया खून बन ही नहीं रहा था। दो आपरेशन हो चुके थे। उनकी पत्नी जब भी घबड़ाती या चिन्तित अथवा उदास दिखती तो वह शेर या चुटकले सुना-सुनाकर उसका मन बहलाते। दिल-दिलासा देते हुए कहते—सोहिन्दर, तू फिक्र बिल्कुल मत कर। मैं जरूर चंगा हो जाऊंगा। मेरा एक हाथ या आंखें चली गईं तो क्या हुआ। देश की रक्षा के लिए यह कोई बहुत बड़ी कुर्बानी नहीं है। इन्सान अपने जिन्दादिली के बल पर जीता है। मैं तो हर हाल में खुश रहूंगा। क्यों सोहिन्दर, चुप क्यों हो गई? फिक्र किस बात की, तू जो मेरी आखें व बांहे हैं! ये बच्चे हैं। हम सब खुश होकर मिल बैठेंगे तो खुशहाली खुद ही दौड़ी आएगी।

सोहिन्दर जी ने बताया कि इसके विपरीत मैं अन्य घायल व्यक्तियों को यह कहते सुनती थी कि हाथ पगु होकर जीने की अपेक्षा तो हम मर जाना चाहेंगे।

घाव सड़ रहे थे इसलिए डाक्टरों ने निश्चय किया कि तीसरा आपरेशन करना उचित होगा। उसके लिए 'ग्राफ्ट' करने के लिए 'स्किन' की जरूरत थी। जब कर्नल कथवटे को इसकी सूचना मिली तो वे अपनी 'स्किन' देने के लिए फौरन पहुच गए। १५-२० जवान बाहर नल पर नहा रहे थे। जब उन्हें पता चला कि मेजर भूपेन्द्रसिंह के लिए 'स्किन' चाहिए वे सब के सब अपनी 'स्किन' देने के लिए हाजिर हो गए।

तारीख ३ अक्टूबर को उन्हें आपरेशन थियेटर में ले जाया गया। सोहिन्दर जी ने बताया कि वह दिन मैंने गुरु ग्रंथ साहिब

का पाठ करने और भगवान से अपने सुहाग की रक्षा की प्रार्थना में गुज़ारा था। हम टेलीफोन से कान लगाए बैठे रहे। हम लोग आपरेशन थियेटर के बाहर ही बैठे थे। साढ़े पांच बजे खबर मिली कि उनकी दिल की धड़कन बन्द हो गई है। फिर पता चला कि डाक्टरों ने आपरेशन करके दिल की मालिश करनी शुरू की है और फिर से दिल की धड़कन चालू हो गई है। यदि तीन घंटे निकल गए तो कुछ उम्मीद होगी। पर अफसोस, शाम के साढ़े सात बजे यह बहादुर चिर निद्रा में सो गया।

डाक्टरों ने आपरेशन थियेटर से निकलकर कहा—मिसेज़ भूपेन्द्र, अफसोस है हम उस बहादुर को बचा नहीं सके। वह जिस शान के साथ युद्धक्षेत्र में लड़ा था, उसी शान के साथ वह अपनी मौत के साथ आखिरी क्षण तक लड़ता रहा।

भूपी के स्वर्गवास के बाद सोहिन्दर जी को इतना धक्का लगा कि उन्हें नर्वस ब्रेक डाउन हो गया था। बीच वाली लड़की बाप को याद करके जब भी रोती तो बड़ी समझाती, इतना मत रो मम्मी को पता लगा तो उन्हें फिर नर्वस ब्रेक डाउन हो जाएगा।

यतीन्द्र पूछती—पापा अब ईश्वर की तरह अलोप हो गए हैं। पर वे हमें स्वर्ग से चिट्ठी क्यों नहीं लिखते ?

बेचारे बच्चे !!

जब मिसेज़ भूपेन्द्रसिंह राष्ट्रपति भवन में अपने पति के बदले महावीर चक्र लेने गईं तो यही बात सोच-सोचकर उनकी आंखें भर आईं कि काश आज वे खुद ही इस सम्मान को स्वीकार करने आते तो यह दिन हमारे लिए बड़ी खुशी और सौभाग्य का

होता! अफसोस गढ़ मिला पर सिंह तो चला गया। देशभक्त भूपी अपने जीवन-आदर्श के लिए जीए और उत्सर्ग हो गए।

आखिरी रात की बात है। भूपी ने अपनी सोहिन्दर से कहा, प्रिये, आज रात को तू यहीं मेरे पास रह जा। मुझे चार आदमी लेने आते हैं। मैं इनसे बड़ा परेशान हूं। मैं अकेला नहीं रहना चाहता।

सोहिन्दर जी ने सजल आंखों से कहा—मुझे लगा इन्हें अब अपने अन्तिम समय का भास हो रहा है। मैं कांप गई। हे राम! तो क्या ये मुझे हमेशा-हमेशा के लिए छोड़कर चले। मैंने बड़ी विनती करके उस रात अस्पताल में रहने की अनुमति प्राप्त की। मैं अपने भूपी के पायताने बैठी हुई दुआ करती थी। पर अफसोस!

तारीख ३ अक्टूबर को भूपेन्द्रसिंह का स्वर्गवास हुआ और उसी दिन उसके लेफ्टिनेण्ट कर्नल बनने के आर्डर हुए। भारत सरकार ने उन्हें महावीर चक्र (मरणोपरान्त) देकर सम्मानित किया। शायद ऐसे वीरों को देखकर ही कवि ने कहा होगा—

क्षण भंगुर माटी की अमरता बुलाती है,
खून की परीक्षा यह कभी-कभी आती है।
सूरज के टुकड़े तुम, हस्ताक्षर विजयी के,
तुमसे इतिहासों की अमरता बढ़ जाती है॥

वीर भूपी, वतन हमेशा तुम्हारा ऋणी रहेगा, तुम धन्य हो। मरकर भी तुम अमर हो। भूपेन्द्रसिंह जिन्दाबाद!

तुमने दिया देश को जीवन, देश तुम्हें क्या देगा।
अपनी आग तेज करने को नाम तुम्हारा लेगा॥

जाटां दी फतह

—मां, हां, कहानी पूरी करो न। हां, फिर राम ने किस प्रकार से राक्षसों का संहार किया ?

मां को नींद आ रही थी, उसने अपने छह बरस के बालक को थपकाते हुए कहा—बेटे, सो जा, कल बाकी कहानी सुना दूंगी।

पर बालक ज़िद करके रोने लगा। नहीं, मुझे आज ही पूरी कहानी सुना दो। आंगन में से बालक के बाबा चौ० छुट्टनलाल ने आवाज़ दी—राम बेटा, इधर आ जा। मां को तंग क्यों करे है। इधर आ मेरे पास, मैं कहानी सुनाता हूं।

बालक राम खटिया से कूदकर बाबा के पास पहुंच गया। बाबा कहानी कहते रहे और पोता सुनता रहा। सुबह राम की मां ने अपनी सास से कहा—अम्मा जी, तुम्हारा यह पोता कहानियों का बड़ा प्रेमी है। बस इसे तो रात-दिन रामायण, महाभारत और राजपूत वीरों तथा बहादुरों की कहानियां सुनने की चाट पड़ी हुई है।

सास ने हंसकर अपने पोते को छाती से लगा लिया, बोली—अरी बहू, यह तो कोई अवतारी वीर हमारे यहां पैदा हुआ है। तभी तो मैंने इसका नाम आशाराम रखा है। इसपर हमारी आशा है, यह भी राम को अपना आदर्श मानेगा और देश के लिए त्यागी बनेगा तभी इसका नाम आशाराम त्यागी सफल होगा।

बालक आशाराम को अपनी दादी की बातें बड़ी अच्छी लगती थीं। कौन जाने बचपन से ही उसके अच्छे संस्कारों ने उसे देशभक्त बना दिया।

पूत के पांव पालने मे, यह उक्ति बालक आशाराम पर पूरी-पूरी सही उतरी। बचपन से ही उसकी यह तमन्ना रही कि वह फौज में भरती होकर भारतीय वीरों की परम्परा का एक नया आदर्श स्थापित कर दिखाए।

मोदीनगर (जिला मेरठ) से दो मील दूर फतहपुर नाम का एक गाव है। इस गाव के नाम के अनुकूल ही आशाराम त्यागी को मानो फतह यानी विजयश्री ने अपना वरद पुत्र स्वीकार किया। इनके पिता चौ० सगुधासिंह गांव के प्रधान है। वे बड़े

प्रगतिशील विचारों के व्यक्ति हैं। घर की ज़मींदारी है। परन्तु उन्हें इस बात का बड़ा शौक था कि आशाराम उच्च शिक्षा प्राप्त करे। आशाराम ने अपनी प्रारंभिक शिक्षा मोदीनगर कालेज में प्राप्त की, फिर मेरठ से एम० ए० पास किया। पढ़ाई समाप्त करते ही वे फौज में भर्ती हो गए। सेना में दाखिल हुए उन्हें अभी चार वर्ष ही हुए थे कि उन्होंने अपनी दिलेरी और सूझबूझ का प्रमाण दिया। सिक्किम मोर्चे पर अदम्य साहस और वीरता प्रदर्शन करने के कारण उन्हें राष्ट्रपति पदक मिला और पदोन्नति भी हुई। वे मेजर बना दिए गए।

मां-बाप और बहन की बड़ी इच्छा थी कि आशाराम की अब शादी कर दी जाए। एक दिन बाबा ने कहा—राम बेटा, मैं बूढ़ा हूं। तेरी शादी देखने की बड़ी साध है। तेरे से छोटों की तो शादी हो गई। तू क्यों अड़ा हुआ है ?

राम बोला—बाबा जी, ऐसी भी क्या जल्दी है। देश पर युद्ध के बादल मंडरा रहे हैं। इस समय शादी-ब्याह की बात जाने ही दें।

मां-बाप ने भी इशारा किया पर आशाराम बात टाल गया, पर अन्तिम भैयादूज पर लाडली बहन अड़ गई। बोली—भैया आज जो मागूं सो दोगे ? भैया ने सहज मुसकराकर कहा—अच्छा मांग ले जो मांगना है। तू भी याद रखेगी कि किसी बात के धनी भाई से पाला पड़ा था।

बहन ने तुरन्त कहा—देखो, बाद में मुकर मत जाना। तुम वचन दे चुके हो।

उसने भाई के माथे टीका लगाया और मिठाई खिलाकर

बोली—आज की दक्षिणा के रूप में मुझे यह भाभी चाहिए। यह कहकर उसने अपनी होनेवाली भाभी कविता की फोटो निकालकर दिखा दी।

भाई ने प्यार-भरी झिड़की देकर कहा—तू तो बड़ी चालाक निकली। मुझे तो तूने ठग लिया।

—हां, अभी तो ऐसा ही कहोगे। जब भाभी आ जाएगी तब देखना तुम कितने खुश होगे। भाभी ग्रेजुएट है काशी विश्वविद्यालय की।

खैर जी, होनहार देखो २७ जून, १९६५ को आसाराम और कविता विवाह-सूत्र में बंध गए। गांव में धूम मच गई कि चौधरी के घर का बेटा जैसा बढ़िया वैसी ही बढ़िया बहू आई। अभी विवाह की मेहदी भी हल्की पड़ने न पाई थी कि मेजर आसाराम को अपनी जाट रेजिमेंट के साथ फौरन सीमा पर पहुंचने का हुक्म हुआ।

विदाई की वेला वैसे ही बड़ी मार्मिक होती है। जाते समय बहन ने आरती उतारकर तिलक लगाया। मां ने कहा—बेटा, मां के दूध की लाज रखना। युद्धक्षेत्र में पीठ मत दिखाना। बाबा ने माथा चूमकर आशीर्वाद दिया। बाप ने अपने बहादुर बेटे को पीठ ठोककर प्रोत्साहन दिया। आसाराम कमरे में पत्नी से अन्तिम विदा लेने गए। कविता ने अपने मेहंदी लगे हाथों से पति की भुजाएं थपकीं। फिर सजल नेत्रों से पति की मानो आरती उतारकर अपना मस्तक उनके विशाल वक्षस्थल पर टेक दिया। घड़ी-भर के लिए दोनों मौन रहे। फिर आसाराम ने पत्नी को ढाढस देते हुए कहा—देखो कविता, मैं अकेला तो

अधूरा हूं। तुम्हारी हिम्मत ही मुझे प्रेरणा देगी।

कविता ने सिर उठाकर कहा—मेरी शुभ कामनाएं आपके साथ हैं। मैं आपकी विजय और सुरक्षा की कामना करती रहूंगी।

गांव वालों ने अपने वीर बांकुरे लाडले का जयघोष करके उसे विदा दी।

डोगराई के ऐतिहासिक युद्ध की गाथा मानो आशाराम के बलिदान की गाथा है। वागा सेक्टर में डोगराई का यह ऐतिहासिक युद्ध लड़ा गया। पाकिस्तानी हार पर हार खाकर खिसिया गए थे। डोगराई का यह युद्ध मानो पाक-हिन्द युद्ध का अन्तिम अध्याय था। भारतीय वीरों की वीरता व उत्साह का श्रीगणेश जितना सुन्दर था इसकी इतिश्री भी उतनी ही शानदार रही। यहां पर पाकिस्तानियों ने थोड़ी-थोड़ी दूर पर पिल वाक्स वनाए हुए थे। इन पिल वाक्सों में छिपकर ही पाकिस्तानी गीदड़ वहादुर भारतीय सेना पर व्रेन गनों से गोलावारी करते थे। ये पिल वाक्स एक तरह के छोटे-छोटे सीमेंट के गढ़ थे जिनमें वैठकर पाक सिपाही तीन ओर से व्रेनगनों द्वारा आती हुई सेना पर अचानक गोलियों की वर्षा शुरू कर देते थे। इन पिल वाक्सों की दीवारें पांच फुट मोटी होती हैं। इसलिए इनपर किसी गोली का ज़रा भी प्रभाव नहीं पड़ सकता। तिसपर तारीफ यह कि इन पिल वाक्सों का अधिकांश हिस्सा ओट में नीचे गहराई तक छिपा रहता है ऊपर केवल थोड़ा-सा हिस्सा जहां से तोप का मुंह थोड़ा वाहर को निकला रहे दिखाई पड़ता है। पाकि-

स्तान ने कई वर्ष पहले से युद्ध की तैयारी शुरू कर दी थी। उसने डोगराई तथा लाहौर के आसपास सभी जगह सीमेंट के ये मज-बूत गढ (पिल बाक्स) बना लिए थे।

दोनों ओर से मोर्चे संभाले सेनाएं डटी हुई थीं। पाक सेना अपने टैंको से लैस थी। उधर पिल बाक्सों में बैठे पाक सैनिक भारतीय जवानों पर निशाना साध रहे थे। डोगराई गाव के दाएं भाग में शत्रु ने टैंक विरोधी सुरंगें बिछाई हुई थी। इतनी सुरक्षा की तैयारी के बाद पाकिस्तान की सेना आगे बढ़ रही थी। उनकी बटालियन में आगे टैंको की सुदृढ पंक्ति थी।

'हमें पाकिस्तान का नशा उतारना है, उसकी हेकड़ी पर लात मारनी है। आखिर, उसने समझ क्या रखा है, हमें ? क्या हम भेड़-बकरियां हैं, जो उसने हमारी तरफ अपने दात बढ़ाने की जुर्रत की है ? आज हमें उसके दात तोडना है, गिन-गिनकर उसके घमंड के घड़े फोडना है। दस बार हम उसे बता देना चाहते हैं कि इधर जो आखें तरेरता है, उसकी आखें निकाल ली जाती हैं—ये थे शहादत से दो रोज पहले अपने साथियो से कहे गए, शहीद आशाराम त्यागी के शब्द।

हमारी ओर से पहले डोगरा पलटन ने इनका मुकाबला किया। बहादुरी से लड़ते हुए उन्होंने पाकिस्तान के आक्रमण को विमुख कर दिया। इसी बीच तीसरी जाट बटालियन को हुक्म हुआ कि वह लाख के गाव पर कब्जा करती हुई डोगराई गांव की ओर बढ़े। जाट रेजिमेंट ने चीते का दाव खेला और उसने रात को ही डोगराई गाव से होकर पाक सेना को जा घेरा। यहा

दोनों सेनाओं का जमकर मुकाबला हुआ। इसी युद्ध में मेजर आशाराम त्यागी ने अपना जौहर प्रकट किया। यह रोमांचकारी युद्ध इतिहास की एक अविस्मरणीय घटना बनकर रह गई।

शत्रुओं ने खतरा देखकर इच्छोगिल नहर का पुल उड़ा दिया था। नहर के उस पार से पिल बाक्सों ने कहर ढाया हुआ था। इन पिल बाक्सों को नहर के इस पार रहकर बमों से नष्ट करना असंभव था। एक ही उपाय था कि किसी तरह तैर कर नहर पार की जाए और अचानक शत्रुओं के पिल बाक्सों के दरवाज़े के पास जाकर हमला बोल दिया जाए। इस खतरे के काम को करने का जिम्मा आशाराम ने स्वीकार किया। वह अपनी टुकड़ी के साथ चुपचाप नहर पार कर गए।

मेजर आशाराम त्यागी ने जब देखा कि टैंकों और पिल बाक्सों में छिपे पाकिस्तानी सिपाहियों की गोली वर्षा से उनके सिपाहियों की गति रुक गई है तो वे बाज की तरह पाकिस्तानी टैंकों पर झपटे—'हर-हर महादेव' के नारों के साथ जाटों ने उनका अनुकरण किया। मेजर त्यागी ने सामने के एक पैटन टैंक को नष्ट कर दिया। फिर वे दूसरे पर लपके। अपने नेता के शौर्य से प्रेरित वीर जाटों ने पाकिस्तानी टैंकों को ऐसे घेर लिया जैसे चीते भेड़-बकरियों को घेर लेते हैं। दूसरे के बाद तीसरा टैंक भी मेजर आशाराम के हाथों ढेर हो गया। एक घंटे के अन्दर जाटों ने २२ टैंक तोड़े। तब तक मेजर त्यागी के सीने पर पांच गोलियां लग चुकी थीं। मगर ज़मीन पर पड़े-पड़े ही वे जाटों को हुक्म देते रहे—हर-हर महादेव, बढ़ो जवानो, जाटां दी फतह। गोलियों की बौछारें हो रही थीं और जाट रेजिमेंट

के आगे-आगे सरक-सरक कर मेजर त्यागी खून में लथपथ आगे बढ़ रहे थे। जाटों ने पाकिस्तान की पंजाब रेजिमेंट को चारों तरफ से भून दिया और जब उन्होंने नारा लगाया—जाटां दी फतह, तो मेजर त्यागी ने भी दोहराया जयहिन्द और वे बेहोश हो गए।

मेजर *आशाराम को बेहोश अवस्था में जब अस्पताल लाया* गया तो दम तोड़ने से पहले उन्होंने नर्स से अपनी अन्तिम इच्छा यह कही कि मुझे मेरे गाव ले जाया जाए, जिसमें मेरी मां यह भली भाति देख ले कि मैंने पीठ पर नही, बल्कि सीने पर दुश्मन की गोलियों के वार सहे हैं।

मेजर आशाराम की चिन्ताजनक हालत के बारे में जब उनके पिता जी को गाव में सूचना मिली तो सारे गाव को जहा अपने इस वीर पर गर्व हुआ, वहा सर्वत्र शोक की लहर भी छा गई। आखिर, उनके पिता और उनकी पत्नी अमृतसर दौड़े गए, परन्तु खेद है कि तब तक मेजर आशाराम वीरगति को प्राप्त हो चुके थे।

मेजर आशाराम के शव को एक सैनिक जीप में गाव लाया गया, जहा सभी ग्रामीणों ने अपने लाडले को श्रद्धाजलि दी, और फिर *इक्कीस गोलिया दाग कर पूरे सैनिक-सम्मान के साथ* उनका दाह सस्कार कर दिया गया।

मा ने अपने वीर पुत्र की गोलियों से छन्नी हुई छाती पर हाथ धर कर कहा—मेरे बच्चे, तू ने तो अपनी मा की कोख धन्य की। कुल का नाम उज्ज्वल कर दिया और अपनी मातृ-भूमि के ऋण को भी चुका गया। तेरी कहानी स्वयं में एक

स्मारक है। परन्तु फिर भी मैं तेरा कोई ऐसा स्मारक बनाऊंगी जो सभी युवकों को मातृभूमि की रक्षा के लिए प्रेरणा दे।

यह कहकर आंचल में अपना मुंह छिपा वे फूट-फूटकर रो पड़ीं।

उनके पिता चौ० सगुवासिंह ने सजल नेत्रों से गर्व सहित कहा—आत्मा तो अमर है ही, वह तो कभी नष्ट होती ही नहीं। सभी के शरीर को एक न एक दिन नष्ट होना ही है। यदि हमारा आशा किसी डकैती में, फौजदारी में मारा जाता तो हमारे तमाम खानदान पर कालिख पुत जाती। उसने देश की रक्षा के लिए पापी पाकिस्तानियों से लड़ाई के मैदान में लड़ते हुए प्राण देकर हमारा, हमारे खानदान का, हमारे गांव का नाम रौशन किया है, जिसपर हमें गर्व है। यह कहते-कहते उनका गला रुंध गया। आंसू पोंछकर उन्होंने अपनी अधूरी बात पूरी की—वास्तव में आशाराम की पीठ पर एक भी गोली की खरोंच तक न थी। उसने तमाम गोलियां छाती पर ही सहन कीं और हमारे धर्मशास्त्रों के अनुसार सीने पर गोलियां खाकर वीरगति प्राप्त होने वाला सूर्यलोक को भेदन करके मुक्त हो जाता है। उसने तो दुर्लभ मुक्ति को भी प्राप्त कर लिया है।

मरने के पश्चात् इन्सान की बातें याद करके ही प्रियजन मन को तसल्ली देते हैं। बचपन से लेकर अब तक का सारा घटना चक्र जब तब आंखों के आगे घूम जाता है।

—आशाराम के पिता ने बताया कि जब आशाराम फौज में भर्ती हुआ तो मुझे कुछ परेशानी हुई। आशाराम ने मेरी परेशानी का कारण पूछा तो मैंने कहा—"बेटा, न तो हम फौज

में तेरे मर जाने के डर से हिचक रहे हैं, न मोर्चे पर जाना पड़ेगा इसकी हमें चिन्ता है। हम तो एक बात चाहते हैं, तेरे बाप-दादा हवन करके शुद्ध पवित्र भोजन करने वाले हैं, तू फौज में अण्डा-मांस मत खाने लगियो। हमारी बात सुनकर आशाराम ने आश्वासन दिया था कि पिताजी, आप चिन्ता न करें, आपकी आज्ञा का पूरी तरह से पालन करूंगा और वास्तव में उसने आखिर तक हमारी बात का पालन किया।

उनके बूढ़े बाबा जिनकी कमर झुकी हुई थी और जो जवान पोते की मृत्यु से विचलित-से हो रहे थे, भरे मन को समझाते हुए बोले—चलो उसने प्राण देने से पहले देश की फतह तो करा दी। वह इतनी हिम्मत से दुश्मन से लड़ेगा, किसे विश्वास था?

इस वीर पुंगव को भारत सरकार ने महावीर चक्र से सम्मानित किया। जब उनके पिता ने यह सुना तो वे बोले—बेटे का सबसे बड़ा सम्मान व सबसे अच्छा स्मारक यह होगा कि डोगराई, जिसे मेरे बेटे ने अपने रक्त से फतह कराया, अनेक जवानों ने प्राण देकर दुश्मन से जीता, पर हमेशा-हमेशा के लिए भारत का तिरंगा फहराता रहे। आशाराम का यदि कहीं स्मारक भी बने तो वह डोगराई कस्बे में बने।

उनकी नव विवाहिता पत्नी कविता जिनके दुख का अन्त नहीं, मन को कड़ा करके बोलीं—जाते समय उन्होंने मुझसे वचन लिया था कि मैं वीर की पत्नी के योग्य बनूंगी। मैंने निश्चय किया है कि अपना शेष जीवन राष्ट्र की सेवा में लगा दूंगी।

अपने खाली समय में प्रायः उनका ध्यान अपनी नवोढ़ा पत्नी कविता की ओर लग जाता था तो वे सुनहले सपनों में खो

जाते थे। विदाई के समय की घड़ी उन्हें याद हो आती थी। वीरगति प्राप्त होने से एक दिन पहले उन्होंने अपनी पत्नी को पत्र लिखा था—मैं मोर्चे पर एक शीशम के पेड़ के नीचे बैठा हुआ हूं। पास में मेरी गाड़ी खड़ी हुई है तथा हथियार रखे हैं। हमने दुश्मन को बुरी तरह से रौंद डाला है। पाकिस्तानी नर-पिशाचों की हेकड़ी व मद को चूर करते हुए हमारे जवान आगे बढ़ रहे हैं। इस बार हमने यह दृढ़ निश्चय किया है कि पाकिस्तानियों की बर्बरता को बुरी तरह से कुचलकर ही छोड़ेंगे।

"...इस समय मैं पेड़ के नीचे बैठा हुआ किशमिश खा रहा हूं और तुम्हें पत्र लिख रहा हूं। तुम मेरे लिए भगवान से यही प्रार्थना करना कि मुझे भी दुश्मन को दो हाथ दिखाने का अवसर मिले..."

कविता ने आंखों में आंसू भरकर बताया कि यह पत्र मुझे उनके वीरगति प्राप्त करने के बाद मिला।

डोगराई के ऐतिहासिक युद्ध में मेजर आशाराम त्यागी जहां बेहोश होकर शर-शय्या पर सोए थे, वह मिट्टी सारे देश के लिए प्रणम्य हो गई है। लोग आते हैं और उस तीर्थ-स्थल से मिट्टी ले जाते हैं। सिक्ख कहते हैं मेजर त्यागी ने गुरू जी की पवित्र भूमि को अपने बलिदान से पूजा है, यह मिट्टी परम पवित्र है। हिन्दू कहते हैं, यह मिट्टी नहीं, भारत माता की मांग का सिंदूर है। ईसाई कहते हैं यह मिट्टी भगवान ईसा की याद दिलाती है। ईसाई बलिदान के पुजारी है। मुसलमान कहते हैं यह मिट्टी नहीं है, मजहब का प्रत्यक्ष दर्शन है, खुदा की शान है।

शत्रु के खून से हो लाल हमारी धरती
हजारों साल का इतिहास फिर बदलता है;
रक्त से हमको चुकानी है वतन की कीमत
फिर को दुश्मन के हमें आज फिर कुचलना है।

राजा चौकी का विजेता

ले० कर्नल एन० एन० खन्ना ने अपनी पत्नी को स्थिति समझाते हुए कहा—प्रिय सवि, मैं तो केवल एक दिन के लिए आया हूं। मुझे कल ही पुंछ क्षेत्र में अपनी बटालियन का चार्ज संभालना है।

उनकी पत्नी सावित्री ने उनके पैर की ओर संकेत करते हुए कहा—पर आपके पांव में तो छम्ब के मोर्चे पर चोट लग चुकी है। इस घायल पांव से नया मोर्चा कैसे संभाल सकोगे?

पति ने हंसकर कहा—अंगूठे में स्प्लिण्टर लग गया था। सर्जन मांस काटने को कह रहा था पर मैंने मना कर दिया। कस

के पट्टी बांध ली है और ज़रा ढीला जूता पहन लिया है। बस, पुंछ के मोर्चे पर दुश्मन को शिकस्त देकर जब लौटूंगा तब पांव की ओर भी पूरा ध्यान दे सकूंगा।

सवि का मुंह लटक गया। उसको ढाढ़स बंधाते हुए खन्ना साहब बोले—देखो, तुम एक कर्नल की बेटी तथा एक सिपाही की पत्नी हो। तुम्हें तो राजपूत वीरांगनाओं की तरह हौसला बढ़ाकर मुझे विदा करना चाहिए।

सावित्री खन्ना ने आंसुओं से बोझिल अपनी पलकों को ऊपर उठाते हुए मुझे बताया—बहन, बस यही खन्ना साहब से मेरी आखिरी मुलाकात थी। ता० १७ अगस्त से २८ अगस्त तक वह छम्ब क्षेत्र में कमान संभाले रहे। वहां उन्होंने ७ चौकियों पर कब्जा किया। फौज का हौसला बढ़ गया था। वहां से पुंछ के मोर्चे पर जाने से पहले खन्ना साहब ने जवानों को कहा था कि उन्हें सौगन्ध है पीछे न हटें और मेरे बाद भी शत्रु को शिकस्त पर शिकस्त देते जाएं।

वही हुआ। पाकिस्तान ने छम्ब क्षेत्र में १ सितम्बर को पैदल सेना की एक ब्रिगेड और भारी संख्या में टैंकों के साथ हमला किया था। इस हमले का उद्देश्य भारतीय सेना की सप्लाई के मार्गों पर अधिकार जमाना था। हमारे जवानों ने शत्रु का डटकर मुकाबला किया और उनकी बाढ़ रोक दी।

पाकिस्तानियों ने पैदल सेना के हमले से पहले भारतीय ठिकानों पर सैबर जेट विमानों से हमला किया था। बाद में उन्होंने अपने टैंक भेजे। टैंक जब भारतीय ठिकाने से लगभग एक हजार गज की दूरी पर थे, तब हमारी तोपों ने उनपर

गोलाबारी शुरू की।

एक ओर तो हमारी ओर से हाजीपीर दर्रे पर कब्जा करने की योजना बन रही थी, और दूसरी ओर उड़ी और पुंछ को जोड़ने की कार्रवाई की चाल थी। यह इलाका जम्मू-कश्मीर में युद्ध-विराम रेखा के भारत की तरफ के प्रदेश में बहुत आगे तक निकला हुआ है। हमलावरों को खास तौर पर यहीं जम्मू-कश्मीर क्षेत्र में भेजा जाता था। इस क्षेत्र में पाकिस्तान की बहुत सी चौकियां, अड्डे और सप्लाई-डिपो थे। और यह रास्ता था भी संकरा। इसीलिए हमलावरों ने यहां पर खूब राशन, वर्गैरह, जीप, टैंक आदि इकट्ठे किए हुए थे और अपना एक मजबूत गढ़-सा बना लिया था। यहां पर २५ पाकिस्तानी चौकियां कायम थीं।

२ सितम्बर को ले० कर्नल खन्ना की बटालियन को पुंछ क्षेत्र में युद्ध विराम रेखा के पार राजा चौकी पर अधिकार करने का हुक्म हुआ। संयोग की बात देखिये कि कर्नल खन्ना का दुलार का नाम भी राजा ही था। सो राजा चौकी पर बहादुर राजा कब्जा करने चला। इस चौकी पर बड़ी मजबूत किला-बंदी थी। इसके आस-पास शत्रु ने माइनें डाली हुई थीं। कांटे-दार तारों से घेराबन्दी की हुई थी। इसकी हिफाजत के लिए ५ भारी ब्राउनिंग मशीनगन तथा मझली मशीनगनें लगी हुई थीं।

कर्नल खन्ना ने अपनी सिक्ख लाइट रेजिमेंट को तीन टुक-ड़ियों में बांट दिया। चौकी पहाड़ी पर स्थित थी। इस मुश्किल ऊंचाई से शत्रु ऊपर चढ़ती हुई भारतीय सेना की टोलियों से

भून रहा था। दोनों अग्रिम टुकड़ियों का काफी नुकसान हुआ। कई वीर बहादुर खेत रहे। ऊंचाई पर होने के कारण शत्रु बेह-तरीन पोज़ीशन में था। फिर उसके पास भारी तोपें थीं। सिख रेज़िमेण्ट के सिपाही बहुत कम शस्त्र लेकर पहाड़ पर चढ़ रहे थे। दो-तीन दिन बीत गए परिस्थिति शोचनीय दिख रही थी। पर कर्नल खन्ना ने अपने जीवन में असफलता के आगे झुकना नहीं सीखा था। उन्होंने अपने साथियों से मंत्रणा की और ५ सितम्बर की रात को ही रिजर्व टुकड़ी को लेकर वे खुद आगे बढ़े। शत्रु का ख्याल था कि इस अंधेरी रात में भला कौन अपनी नींद खराब करेगा। इसलिए वे बेफिक्र थे। दबे-दबे पांव खन्ना साहब की बटालियन अपने लक्ष्य वाले स्थान से ६०० गज की दूरी तक पहुंच गई। तभी शत्रु को उनकी आहट लग गई और उन्होंने मशीनगनों से गोले बरसाने शुरू कर दिए। खन्ना को अपनी योजना असफल होती दिखाई पड़ी। पर वह हिम्मत हारने वाले नहीं थे। उनके साथी भी प्राण हथेली पर रखकर ही मृत्यु को वरण करने का प्रण करके उनके साथ आए थे। कूच करने से पहले ही खन्ना ने सबसे कह दिया था—जिन्होंने ऊपर जाकर पीठ दिखानी हो वे बेशक यहीं कैम्प में रुक जाएं। सेकण्ड सिख रेजिमेण्ट को सिख गुरुओं की आन निभानी है।

कर्नल खन्ना ने युद्ध पंक्ति में आगे, दायें, बायें घूम-घूमकर जवानों की हिम्मत बढ़ाई। और जब उनकी टुकड़ी शत्रु के बंकर से कुल ६० गज रह गई तो खन्ना ने दोनों हाथों में हथ-गोले लेकर चौकी पर धावा बोल दिया। जब वह कुल २० गज की दूरी पर थे तो शत्रु का एक गोला (ग्रेनेड) लगने से उनका

बायां हाथ घायल हो गया और उसके टुकड़ों से उनका दायां कन्धा भी जख्मी हो गया। उनके साथियों ने चाहा कि कर्नल साहब पीछे ओट में चले जाएं, परन्तु उन्होने ललकार कर कहा—मेरी परवाह मत करो। वाह गुरू की फतह ! आगे बढ़ो। चौकी पर कब्जा कर लो।

ऊपर चढ़ते समय उनके एक विश्वासपात्र सैनिक ने कहा था—सर, यह गोलों की आवाज मुझे अप्रिय लगती है।

खन्ना ने जवाब दिया—तुम यकीन रखो युद्ध किसीको प्रिय नहीं है। परन्तु जब अपने देश की रक्षा, अपनी आन निभाने का प्रश्न आता है तो देशभक्त सिपाहियों का खून खौलने लगता है। लड़ाई हमने तो छेड़ी नही। पर जब कोई अपना नापाक पाव हमारी भारत मा के आंचल पर रखेगा तो उसे कुचलना हमारा फर्ज है। फर्ज के आगे तो मुझे अपने प्राणों की भी परवाह नही।

जो उन्होने कहा वह कर दिखाया। घायल होकर भी वह मोर्चे पर डटे रहे। अपने साथियों को आगे बढने के लिए ललकारते रहे। और सबसे आगे बढते गए।

बंकर के पीछे दुबके शत्रु काप गए। उन्हे कर्नल खन्ना साक्षात् अपनी मौत से आते नजर आए। यह इन्सान है कि कोई कयामत ! गोलों की वर्षा में आगे बढ़ता चला आ रहा है। दुश्मनों के हौसले पस्त हो गए। उनमें से कई दुश्मन कर्नल खन्ना द्वारा फेंके गए गोलों से वही ठंडे हो गए, कुछ मोर्चा छोड़कर भाग गए। दुर्भाग्य से एक गोला खन्ना के पेट मे आकर लगा

जिससे उनका लिवर पंचर हो गया और वह भारत माता की जय का नारा लगाकर वहीं भूमि पर लेट गए। साथियों ने उन्हें उठाकर पीछे ले जाना चाहा परन्तु उन्होंने हटने से यह कहकर इनकार कर दिया—मुझे यहीं छोड़कर फौरन चौकी की ओर बढ़ो। भागते हुए शत्रु का हौसला ही क्या ? इसी समय चौकी पर कब्ज़ा कर लो।

उनके एक साथी ने बताया—हमारे कर्नल साहब के शरीर से बेहद खून जा रहा था। उनकी नब्ज धीमी पड़ती जा रही थी। पर उनकी दृष्टि राजा चौकी पर टिकी हुई थी। जब उन्होंने चौकी पर कुछ भारतीय जवानों को खड़ा देखा और एक जवान ने आकर विजय की सूचना दी तो उन्होंने कहा—मेरे जवानों को वाह गुरू की फतह कहो और उनकी पीठ ठोककर शाबाशी दो।

इस साहसी लेफ्टिनेण्ट कर्नल को अग्रिम मोर्चे पर स्थित चिकित्सालय में जब स्ट्रेचर पर डालकर ले जाया जा रहा था तो मार्ग में ही उन्होंने वीर गति प्राप्त की।

इस चौकी पर भारतीय सेना ने बहुत बड़ी मात्रा में खाद्य सामग्री, गोला-बारूद और सैनिक उपयोग का साज-सामान बरामद किया। इस विजय से हमारी सेना का हौसला बढ़ गया। उन्होंने ५ सितम्बर को रात में पुंछ क्षेत्र के उत्तर में दुश्मन की अन्य तीन चौकियों पर भी कब्ज़ा कर लिया। राजा चौकी की विजय के बाद उनका जोश ठाठें मार रहा था। अपने प्रिय कर्नल के बलिदान के बाद उन्होंने सोचा कि उनकी आत्मा को अन्य चौकियां ले लेने पर ही शान्ति मिलेगी। यद्यपि अन्य तीनों चौकियों पर मज़बूत किलाबन्दी थी, और सीमेंट कंक्रीट से बनी

बन्दकें और सुयोजित ढंग से मशीनगनें फिट की हुई थी परन्तु भारतीय सेना ने इनपर योजना बनाकर हमला किया। अन्धेरे की आड़ में हमारी फौजें आगे बढ़ी और बिजली की तरह दुश्मनोंपर टूट पड़ी और उन्हें हैरत में डाल दिया। बड़ी घमासान लड़ाई हुई और एक के बाद एक चौकियां उनके कब्जे में आती गई। पहली चौकी पर ही उन्होंने ५० दुश्मनों को मारा और ५० लारियों पर लाद कर लाने लायक गोला-बारूद उनके हाथ लगा। और वे शत्रु को रौंदते हुए आगे बढ़ते चले गए।

श्रीमती खन्ना ने मेरे आगे एक लिफाफे मे से परिवार के कई चित्र निकाले। ब्याह के बाद का उनका एक चित्र था। कितना सुन्दर सजीला जोड़ा !! लगता था भगवान ने दोनो को फुरसत में बैठकर गढ़ा था। वैसे सुन्दर जोड़े तो कई नज़र आएंगे, परन्तु ऐसा प्रेमी जोड़ा विरला ही होता है। खन्ना साहब न केवल एक बहादुर सिपाही ही थे परन्तु कर्तव्य परायण पिता तथा एक प्रेमी पति भी थे। उनका जोड़ा हंस-मरालों का-सा था। एक-दूसरे का प्रिय करने में पति-पत्नी में परस्परहोड़ रहती थी। सावित्री जी ने बताया कि मेरे पति हमेशा वही करते जो मुझे सुखकर होता। लगभग बारह साल हमारी शादी को हो गए थे परन्तु वह मेरे प्रति इस प्रकार का व्यवहार करते थे मानो मैं आज ही डोले से उतरी हूं। उन्हें बड़ा पसन्द था कि मैं सुरुचि पूर्ण वेशभूषा और प्रसाधन में सजी-धजी उनके सामने आऊं। मेरे आराम का उन्हें बड़ा ख्याल रहता था। वे तीन साल जम्मू रहे। मुझे दिल्ली आना होता हमेशा हवाई जहाज से भेजते। मैं

कहती—मेजर की तनख्वाह में यह सब कैसे पुरेगा ? तो जवाब देते—सवि, तुम यह क्यों भूल जाती हो कि तुम अपने राजा प्रियतम की पत्नी हो। उसकी रानी को तकलीफ हो यह राजा कैसे बर्दाश्त कर सकता है ?

मिसेज़ खन्ना की आंखें भर-भर आईं। उन्होंने अपने आंसू पोंछते हुए कहा—बहन, आप मुझे कायर समझेंगी, पर क्या करूं मैं अपने आपको बहुत रोके रखती हूं कि रोऊं न। अपने बच्चों को इसीलिए दो घंटे के लिए मैंने आज बाहर भेज दिया है। पिताजी तो मेरे फौजी अफसर हैं, वे तो दिल-दिलासा देते रहते हैं पर माताजी तो बिल्कुल से सुन्न-सी हो गई हैं। आज आपकी सहानुभूति पाकर मेरा धीरज ढह गया।

मेरा मन खुद ही भर-भर आ रहा था। जब-जब भी किसी शहीद की युवती पत्नी का मैं इंटरव्यू लेने जाती हूं आंसुओं की श्रद्धांजलि मूक संवेदना के रूप में प्रगट हो जाती है। मैंने मिसेज़ खन्ना को सान्त्वना देते हुए कहा—बहन, आप अपने को धन्य समझें। आपको अपने पति से इन दस-बारह बरसों में जो कुछ प्राप्त हुआ है वह सौभाग्य तो विरली ही पत्नियों को मिलता है। उन्होंने तो अपने प्रेम से आपके लिए केवल एक जीवन भर का ही नहीं परन्तु आगामी जीवनों का भी पाथेय जुटा दिया है।

मिसेज़ खन्ना बोली—मेरे पति न केवल मुझमें ही आसक्त थे परन्तु बच्चों की भी हर बात में दिलचस्पी लेते थे। उनकी फिक्र हमेशा रखते थे। मैं अपने लड़के को पढ़ाई के कारण दिल्ली ही छोड़ गई थी, जब वे छम्ब से लौटकर एक दिन के लिए जम्मू मुझसे मिलने आए तो बच्चे से न मिल सकने के कारण उन्हें

अफसोस रहा। बोले— सवि, अब हम साथ ही रहा करेंगे। लड़के के चरित्र निर्माण के लिए उसका बाप के साये में रहना जरूरी है।

वे शिकार के बड़े शौकीन थे। उनके पिता मदनलाल खन्ना फारेस्ट आफिसर थे। इस कारण छुटपन से उन्हें शिकार का बड़ा शौक रहा। ११-१२ बरस की उम्र में ही अच्छे निशाने-बाज बन गए थे। एक बार हम देहरादून में थे। बगले के पास ही एक नाला बहता था। बरसात के दिन थे। बूदाबादी हो रही थी। हम लोग बरामदे में बैठे चाय पी रहे थे कि नाले में से एक साप ने सर ऊपर उठाया। एक ही निशाने मे उन्होने उसका फन फोड़ दिया।

खन्ना साहब का जन्म २० मई, १६२८ को लरकाना (सिन्ध) में हुआ था। वे बचपन से ही बड़े साहसी और सहनशील थे। एक बार की घटना है उस समय ये आठ बरस के ही थे। झूला झूल रहे थे। कुछ बड़े लडको ने उनसे झूला छीनने की कोशिश की। यह बहुत ऊंचे पेंग बढा रहे थे। छीना-झपटी में वे झूले से गिर गए। कलाई की हड्डी का कम्पाउंड फ्रेक्चर हो गया। हड्डी खपचियों की तरह चमड़ी फोड़कर वाहर निकल आई। बड़े लड़के तब तक भाग चुके थे। खन्ना साहब उठे और दूसरे हाथ से घायल कलाई को थामे हुए घर आए। मां कुछ जरूरी काम कर रही थी। सो जब इन्होने कहा—मा, मेरी हड्डी टूट गई है, तो उन्होंने यकीन नहीं किया। पर जब उलटकर देखा तो खन्ना की कमीज और निकर खून से लथपथ थीं। यह देख

कर मां-बाप घबड़ा गए पर खन्ना ने मुंह से उफ नहीं किया। छः महीने तक कलाई प्लास्टर में रही तब जाकर ठीक हुई।

१९४८ में उन्हें कमीशन मिला। अधिक समय पोस्टिंग जम्मू-काश्मीर ही रही। गुलमर्ग में इन्होंने 'विंटर वार फेयर स्कूल' में बर्फ पर स्कीइंग करनी सीखी। इतनी निपुणता प्राप्त कर ली कि फिर कुछ साल के लिए उन्हें उसी स्कूल में इंस्ट्रक्टर भी बना दिया गया। वहां अपने विद्यार्थियों को बड़ी प्रेरणा देते थे। उनमें से कइयों ने हिमालय पर भी चढ़ाई की। टीचर की हैसियत से वे बड़े लोकप्रिय हुए। लड़कों के चरित्र निर्माण की ओर विशेष ध्यान देते थे। १९४८ में जब कश्मीर में पहला हमला हुआ तो इनकी नियुक्ति अपनी बटालियन के साथ हुई। इन्होंने पिता को पत्र लिखा—डैडी, मैंने आपकी इच्छा के विरुद्ध फौज में अपना नाम लिखवा लिया था। पर अब मुझे फ्रन्ट पर जाने का मौका मिला है। आप आशीर्वाद दें कि मैं अपना कर्तव्य निभा सकूं।

इनके पिता ने बेटे को बड़ी प्रेरणा दी और लिखा—बच्चा अपने क्षत्रिय धर्म पर आंच न आने देना।

१९५४ में इनकी शादी कर्नल ओमप्रकाश आनन्द की लड़की सावित्रीजी से हुई। उसी बरस सावित्रीजी ने बी० एस० सी० पास किया था। खन्ना साहब उस समय कैप्टेन थे। कुल डेढ़ महीने पत्नी के साथ रह पाए थे कि फिर इनकी पोस्टिंग कश्मीर में फ्रन्ट पर हो गई। डेढ़ साल के बाद लौटे। उसके बाद पहला फैमिली स्टेशन उन्हें मथुरा मिला। उसके बाद उनकी बदली

मेरठ हो गई। यहीं पर १६५६ में उनका लड़का ग्रश्विनीकुमार का जन्म हुआ। उसके चार साल बाद जब मीरा हुई तो बड़े खुश हुए कि अब परिवार पूरा हो गया है। मीरा से उनका बहुत ही प्यार था। पिछले साल उसका जन्मदिन था। उस समय मेरी छोटी लड़की अंजनी कुछ दिनों की ही थी। खन्ना साहब ने खुद ही सारा कमरा गुब्बारों और झंडियों से सजाया। नन्ही मीरा को कश्मीरी दुल्हन की गुलाबी रंग की वेशभूषा में ड्रेस अप किया। उसके दुपट्टे पर खास तकाजा करके गोटे की कोगरी लगवाई और उसे गोद में उठाकर बोले—सवि, देखो हमारी नन्हीं मीरा आज कैसी प्यारी दुल्हन-सी लग रही है।

जब वे किसी शादी में जाते तो हमेशा यह कल्पना करते कि मीरा की शादी में कैसा जलसा करेंगे। या फिर अपनी शादी के दिन उन्हें याद आ जाते। वह अंग्रेजी में बहुत अच्छी कविता करते थे। उनके अधिकांश रोमेण्टिक पत्र कविता में ही होते। सगाई पर, शादी की वर्षगांठ पर, बच्चों के जन्मदिन पर उन्होंने न जाने कितनी कविताएं लिखी थीं।

सावित्री जी ने एक नोटबुक में उन सब कविताओं की नक़ल की हुई है।

अपनी पत्नी को वे हर तरह से आत्मनिर्भर बनाने की चेष्टा करते थे। बीमा, बैंक, लाइसेन्स आदि बनाने का काम सावित्री जी के ही जिम्मे सौंप दिया था। यदि जवानों में से किसी की पत्नी या बच्चा बीमार हो जाता था तो कहते—सवि, तुम इन्हें लेकर अस्पताल चली जाओ। अब तुम लेफ्टिनेण्ट कर्नल की बीबी बन गई हो, इससे हमारा परिवार भी बढ़ गया है। ये सब जवान

हमारे परिवार के ही सदस्य हैं। इनके दुख-सुख में हमें हिस्सा बटाना है।

जिस दिन कुछ घंटों के लिए छम्ब से जम्मू पत्नी से मिलने आए तो बोले—सवि, तुम्हारे राजा को अब पुंछ में राजा पोस्ट जीतने का काम सौंपा गया है। सो मेरी रानी, आज मुझे खुशी-खुशी विदा करो।

२९ जुलाई को वह तिब्बत बौर्डर से लौटे थे। उन दिनों सावित्री जी दिल्ली में थीं। तार पाकर फौरन कालिकाजी पहुंचीं। खन्ना साहब की पोस्टिंग जम्मू हो गई थी। मुश्किल से एक महीना साथ रह पाए थे कि युद्ध के बादल मंडराने लगे। १७ ता० से २९ अगस्त तक तो छम्ब में रहे। वहां सफलता प्राप्त करने पर उन्हें फौरन हुक्म हुआ कि पुंछ में अपनी बटालियन की कमान संभालो। खन्ना साहब की उत्सुकता देखकर पत्नी कुछ अपने मन की भी न कह सकी। अब की बार जब जम्मू में उनकी पोस्टिंग हुई थी, तो दोनों ने मिलकर कितनी योजनाएं बनाई थीं कि घर कैसे सजाएंगे, किन मेहमानों को बुलाएंगे। गर्मियों की छुट्टियों में कहां-कहां घूमेंगे। सब योजना धरी की धरी रह गई। चमन में बुलबुल जिस फूल पर चहकती थी, वह फूल ही झर गया।

विदा की वेला आई। पति के माथे पर विजय तिलक लगाकर जब पत्नी ने मुंह मीठा कराया तो खन्ना ने अपनी बड़ी बेटी मीरा से कहा—बच्चा, जाओ बाहर मेरे जवान खड़े हैं, उनका भी मुंह मीठा कराकर आओ। उनका भी सगुन करो।

पत्नी की सजल आँखों को चूमते हुए उन्होंने कहा—देखो मणि, बहादुर बनो। हिम्मत रखो। चाहे शत्रु ने राजा चौकी पर कितना विकट मोर्चा क्यों न बांधा हो, परन्तु अब उस चौकी को लेकर ही मानूंगा। अच्छा, अलविदा प्रिये।

सावित्री जी ने रुंधे हुए कंठ से कहा—राजा ने राजा चौकी पर विजय तो प्राप्त की, पर खुद वह खुशखबरी देने मुझ तक नहीं लौटे। वह तो तिब्बत बोर्डर से जम्मू इस आस। से आए थे कि अब तीन साल यहीं रहेंगे। जम्मू आने से पहले उन्होंने मुझे जो पत्र लिखा था उसमें अपने दाम्पत्य जीवन की कई सुखद घटनाओं का कविता में उल्लेख किया। हम कैसे मिले कब सगाई हुई, शादी के बाद कहां-कहां घूमे। और लिखा था, कविता संभाल कर रखना। हम जब मिलेंगे तो साथ-साथ ही पढ़कर उसका आनन्द उठाएंगे। दाम्पत्य जीवन में वह इतना रस लेते थे कि कौन-सी साड़ी मैंने कब पहनी थी, वह कैसी लग रही थी, इन सब बातों की याद उन्हें रहती। मेरे पहनने-ओढ़ने, घर सजाने, खाना पकाने, बच्चों की साज-संभाल, बागवानी आदि सबमें वह बड़ी दिलचस्पी लेते, उत्सव तथा जन्म-दिवस बड़े चाव से मनाते। मित्रों से मिलने-मिलाने तथा खिलाने-पिलाने का उन्हें बड़ा शौक था। बड़े लोकप्रिय और जिन्दादिल आदमी थे।

एक बार जब वह जम्मू में फ्रण्ट पर पोस्टेड थे और पत्नी उस स्थान से दस मील पीछे रह रही थी, तो हर शनिवार को पहाड़ी तथा बर्फीली रास्ता तय करके आते। एक बार उनकी बहन ने कहा—भैया, इतना रास्ता चलकर आते हो, बड़े थक जाते होंगे। वे बोले—मिलन की आशा में थकने का सवाल ही

नहीं उठता। मुझे यदि हफ्ते में दो बार भी आने की इजाज़त मिल जाए तो मैं भागा आऊं।

जब पुंछ क्षेत्र में लड़ाई ज़ोरों पर थी तो मिलिटरी आफि-सरों की बीवियों को वहां से हटा दिया गया। सावित्री जी अपनें पिता के पास दिल्ली आ गईं। ४ ता० को सावित्री जी को पति का अन्तिम पत्र मिला जिसमें उन्होंने लिखा था—हम जल्द ही शत्रु पर ज़बरदस्त हमला करने जा रहे हैं। उनको लोहे के चने चबा देंगे। अश्विनी तुम सबसे मिलकर बड़ा प्रसन्न हुआ होगा। मीरा के पेट में कृमि है यह जानकर चिन्ता हुई। तुम उसका ठीक से इलाज करवाना। बहुत-बहुत स्नेह-चुम्बन। —तुम्हारा राजा।

६ सितम्बर को जबरदस्त हमला हुआ और उसी हमले में उनको वीरगति प्राप्त हुई। ७ सितम्बर को जब सावित्री जी को इस दुखद समाचार की सूचना मिली, पहले उन्हें यकीन ही नहीं हुआ। बस एक ही शब्द उनके मुंह से निकला—यह कैसे हो सकता है! नहीं, नहीं, वे मुझे छोड़कर नहीं जा सकते।

उनकी लड़की मीरा कितने दिन बाद तक अपनी मां से पूछती रही—मम्मी, अब तो लड़ाई बन्द हो गई है, सबके डैडी लौट रहे हैं, हमारे डैडी कब लौटेंगे?

सावित्रीजी ने आंसुओं को ओढ़नी के छोर से पोंछते हुए कहा—मैंने उसे समझाया, बच्चा, तुम्हारे डैडी को भगवान ने अपने पास बुला लिया है। वह अब वहीं रहेंगे। हां, वे भगवान के प्यारे बन गए हैं।

सच है जिन्हें इन्सान से प्यार है, जिनकी जिन्दगी एक खुशनुमा फूल की तरह खिली हुई है, उनकी जरूरत भगवान को भी होती है। उनके देवत्व से ही तो भगवान का देवत्व बल प्राप्त करता है।

हे वीर-पुंगव ! तुम्हें भारत माता पर शहीद होने का गौरव प्राप्त हुआ। तुम धन्य हो। तुम वीरों के प्रेरणा-स्रोत बने रहोगे। इतिहास में तुम्हारा नाम अमर रहेगा।

जब तक हाजी पीर के दर्रे का है नाम,
तब तक श्री रणजोत का याद रहेगा काम।

हाजी पीर दर्रे का वीर

कश्मीर में ८५०० फुट की ऊंचाई पर एक दर्रा है। इसे हाजी पीर का दर्रा कहते हैं। दर्रे की चोटी पर एक प्राचीन मुसलमान सन्त हाजी पीर का मज़ार है। इसी मुसलमान फकीर के नाम पर दर्रे का नाम पड़ा है। इस मज़ार के बारे में अनेक किंवदन्तियां प्रचलित हैं। श्रद्धालु लोग मजार पर 'मेहराव' यानी दो पेड़ों के बीच कपड़े की झालर बांधते हैं और शुभ यात्रा आदि के लिए मिन्नत मांगते हैं।

हमारे जवान चाहे वह हिन्दू हों या मुसलमान, सिख हों या ईसाई, जब भी इस दर्रे से गुज़रते हैं तो रीति-रिवाज के अनु-

सार पीर से दुआ मांगते हैं। अब यह दर्रा 'हाजी पीर बाबा की जय' और 'जय हिन्द' के नारों से अक्सर गूंजता रहता है।

हमारे जवानों का पीर के प्रति यह आदर-भाव पाकिस्तानियों की काली करतूतों से बिल्कुल उल्टा है। उन्होंने पीर के मजार को खंडहर बना रखा था। वहां की शांति भंग करके जनता पर कहर ढाया था। जब से यह मजार उनके कब्जे में था हाजी पीर के आसपास के गांव एक तरह से उजड़ गए थे। लोगों को खाना-पीना, दवा आदि नसीब नहीं होते थे। पाकिस्तान के अत्याचार के नीचे वहां की जनता कराह उठी थी। अपने को इस्लाम का रखवाला कहने वाले इन पाकिस्तानियों ने न केवल मजार ही नष्ट किया परन्तु जौड़िया में एक मस्जिद और रणवीर सिंहपुरा में एक गुरुद्वारे पर बमबारी करने में भी वे नहीं हिचके।

पाकिस्तान इस स्थान की पवित्रता को भूलकर इसी रास्ते से कश्मीर में घुसपैठ करते रहे। हमारी सेना को जब इस बात का पता चला तो उन्होंने दुश्मनों को एक अच्छा सबक सिखाने का निश्चय किया।

हाजी पीर दर्रे की लड़ाई का वीर है तीस वर्षीय साहसी जवान मेजर रणजीतसिंह दयाल!

उसने सिर्फ एक कम्पनी से ही साक चोटी पर पाकिस्तानियों की एक पूरी बटालियन पर हमला कर दिया। हालांकि दुश्मन बहुत अच्छी, मजबूत स्थिति में था, तो भी वह इसलिए आगे बढ़ता गया कि उसे दुश्मन के अड्डे को सर करना था।

उसका कमांडिंग अफसर उसे प्यार से 'पगला' कहता है।

उसका कहना है कि उसे रोकना व काबू में कर पाना मुश्किल है।

ऐसे रणबांकुरों पर भारत को नाज़ है।

मेजर दयाल ने (उस समय उनकी पदोन्नति नहीं हुई थी) २५-२६ अगस्त की रात को एक कम्पनी लेकर सांक की चोटी पर धावा बोल दिया। दुश्मन की भारी गोलाबारी के कारण धावा असफल रहा, किन्तु मेजर दयाल अपनी कम्पनी को सही-सलामत बचा लाए। लौटकर उन्होंने अपने साथियों से कहा—भाइयो, पहले हमले से हमने जो अनुभव प्राप्त किया है, उसके बल पर अब हमारा दूसरा हमला अधिक कारगर होगा। बस योजना बनाकर अगली रात उन्होंने फिर सांक पर धावा बोला और उसपर कब्ज़ा कर लिया। इसके बाद भी वे दुश्मन का पीछा करते रहे और २७ अगस्त को उन्होंने लुडवाली गली पर कब्ज़ा कर लिया। अगले दिन उन्होंने हाजीपीर दर्रे पर कब्ज़ा कर दुश्मन को हैरत में डाल दिया। इस धावे में उन्होंने एक पाकिस्तानी अफसर और ग्यारह सैनिकों को पकड़ा। एक के बाद दूसरी हार खाकर शत्रु बौखला उठा। वे मेजर दयाल की जान के दुश्मन बन गए। हर चन्द उन्होंने कोशिश की कि किसी तरह दयाल को खतम कर दें, या उसे धोखा देकर कैद कर लें। पर वाह रे दयाल! वह एक चतुर चीते की तरह शत्रु पर बराबर हमला करता रहा।

एक अन्य चौकी पर कब्ज़ा करने के लिए हमारी एक पलटन भेजी गई थी। दुश्मन की भारी गोलाबारी के कारण यह पलटन संकट में पड़ गई। लेफ्टिनेण्ट कर्नल दयाल तुरन्त ही एक और

पलटन लेकर पहली पलटन की मदद के लिए गए। यहां उनका मुकाबला पाकिस्तान की नियमित फौज की एक कम्पनी से हुआ जिसके पास ४२ इंच मोर्टार, ३ इंच मोर्टार और मंझोली मशीन-गनें थी। फिर भी उन्होंने हिम्मत नही हारी और बिजली की तरह दुश्मन पर टूटकर उसे हक्का-बक्का कर दिया। इस आखिरी धावे में उनपर मशीनगन की गोलियों की बौछार पड़ी, पर सौभाग्य से वे बच गए। लेफ्टिनेन्ट कर्नल दयाल की असाधारण वीरता और साहस से दुश्मन का हौसला पस्त हो गया। बस उसने जान बचाकर भाग निकलने में ही अपनी खैर समझी।

मेजर दयाल ने कुल ७० सैनिकों की एक टुकड़ी लेकर हाजी पीर के दर्रे पर हमला करने की योजना बनाई थी। वह चाहते थे कि एक बार पीर के दरबार में मैं भी झालर बांध आऊं। उनकी मेहर हो गई तो शिखर पर भारतीय झंडा भी फहरा सकूंगा। उन्होने अपने अफसर से ता० २७ को इस बात की इजाजत मांगी।

उन्होंने कुछ सोचकर कहा—मेजर दयाल, काम है तो बड़ा मुश्किल, खड़ी चढ़ाई है, पर मुझे तुम्हारी हिम्मत पर पूरा भरोसा है।

मेजर ने सेल्यूट मारा और कहा—जनाब, आप फिक्र न करें। इन अत्याचारियों पर पीर का शाप है, अब इनका नाश होकर रहेगा। सांझ का हमला तो इस दर्रे पर हमला करने की भूमिका ही थी।

जब मेजर दयाल के नेतृत्व में सैनिकों ने २८ अगस्त को प्रातः दर्रे में दुश्मन पर हमला किया, तब हमारे सैनिकों की

संख्या केवल ७० थी।

दर्रे तक चढ़ाई खड़ी और बड़ी थकानेवाली थी। हमारे सैनिकों ने रात के अंधेरे में वर्षा होते हुए भी चढ़ाई शुरू की। ज़मीन पर फिसलन हो रही थी। सैनिकों के पास सामान भारी था। यह बड़ा कठिन काम था और साहसी जवानों के ही वश की बात थी।

समय कम था। ठिठुरती सर्दी और भूख-प्यास की परवाह न करते हुए मेजर दयाल के सैनिक शत्रु की गोलियों की बौछार के बीच से आगे बढ़ते रहे। तीन दिन और तीन रात तक इन बहादुर सिपाहियों ने पलकें तक नहीं झपकीं और उन्हें भरपूर खाना भी नहीं मिला।

आगे चढ़ाई और भी कठिन थी। चार हज़ार फुट सीधी चढ़ाई थी। वर्षा तेज़ हो रही थी। फिसलन बहुत थी। दयाल ने दूसरा मार्ग पकड़ा। वास्तव में यह कोई मार्ग नहीं था, बल्कि खड़ी चढ़ाई की ओर से छोटा रास्ता था। अनेक मुसीबतों का सामना करने के बाद ये २८ अगस्त को प्रातः ४।। बजे दर्रे को जानेवाली सड़क पर पहुंच गए।

दयाल ने बताया —मैंने साथियों को विश्राम देना चाहा। दो घंटे बाद हम फिर चढ़े और प्रातः आठ बजे दर्रे के पास एक बांध पर पहुंच गए।

पाकिस्तान के जो फौजी हाजी पीर की चौकी पर थे, भारतीय सिपाहियों को देखकर वे लोग अपने शस्त्र, जूते, सुथने वहीं कीलों पर लटकते छोड़कर भागे। उन्हें कभी उम्मीद भी नहीं थी कि भारतीय वीर खड़ी चढ़ाई करके अचानक उनके

सर पर आ धमकेंगे। असल में वे लोग तो अपने चचा अयूब की तरह कश्मीर की केसरी घाटी में जल्द ही सैर करने की आशा लगाए हुए थे। मजे में बैठे हुए वे अपने ख्याली पुलाव पका रहे थे। उन्हें क्या मालूम था कि भारत के सिंह सिपाही उनकी मौत बनकर चले आ रहे हैं। जब दयाल ने चुपके-चुपके मोर्चा बांधकर उनकी चौकी पर गोलाबारी शुरू की तो वे लोग चौंक पड़े। जब अचानक बंदूकों की ठांय-ठांय उनके कानों में पड़ी तो उन लोगों ने समझा कि हमारी ही कोई टुकडी भारतीय सिपाहियों को डराने के लिए गोलियां छोड़ रही है। यह ख्याल आते ही वे बड़े खुश हुए। उन्होंने सोचा, पाक की योजना बड़ी आसानी से सफल हो गई है और कश्मीर की घाटी पर हमारा कब्जा हो गया है। पर जब गोलियों की बौछार उन्हें अपनी ओर आती प्रतीत हुई, तब उन्हें कुछ सन्देह हुआ।

चौकी के अधिकारी ने अपने साथी से कहा—अरे अब्दुल, जरा बाहर झांककर तो देख कि क्या हो रहा है।

जैसे ही हवलदार अब्दुल ने बाहर कदम रखा कि ठांय से एक गोली उसके सीने में आ लगी और वह वहीं ढेर हो गया। अब तो अब्दुल के सब साथी चौकन्ने हो गए। झपटकर उन्होंने अपनी बन्दूकें संभालीं और बचाव के उपाय करने लगे। थोड़ी देर दोनों ओर से गोलाबारी हुई पर जल्द ही पाक टुकड़ी के पांव उखड़ गए। अपने मृत साथियों और तमाम रसद, गोला-बारूद तथा बांटने के लिए लाए गए सुथने—सब वहीं छोड़कर बचे-खुचे दुश्मन दुम दबाकर भागे।

भारतीय सेना ने दो-चार भगोड़ों को भी वहीं ठंडा कर

दिया। केवल कुछ ही अपनी दुर्दशा की कहानी कहने के लिए बच-कर निकल पाए होंगे। तब से यह दर्रा भारतीय सेना के अधीन है और पाकिस्तान की ओर का रास्ता अब बंद कर दिया गया है। यह दर्रा उड़ी और पुंछ के बीच में पड़ता है।

मेजर दयाल ने अपने अद्भुत साहस और योजनाबद्ध आक्र-मण से यह असंभव विजय प्राप्त करके भारत का तिरंगा ८५०० फुट की ऊंचाई पर गाड़ दिखाया।

दर्रे के सामने एक पहाड़ी पर इस समय राष्ट्रीय झण्डा और सैनिक डिवीज़न का झण्डा शान से फहरा रहे हैं। उड़ी और पुंछ के बीच यह दर्रा बहुत अधिक सामरिक महत्त्व का है। यही नहीं, यहां का मनोहारी दृश्य देखते ही बनता है। चारों ओर सुन्दर पहाड़ियां, हरी घास और चीड़ और देवदार के वृक्ष हैं। भार-तीय वीरों ने दर्रे का उद्धार किया, मजार पर पत्थर ठीक से सजाए और अपनी श्रद्धा प्रकट करते हुए झालर बांधी। 'भारत माता की जय' के नारों से वह स्थान गूंज उठा। वहां जलाई गई अगरबत्ती की सुगन्ध से मियां अयूब और भुट्टो का सर भन्ना गया। वे बौखला उठे और उन्होंने हुक्म दिया—इस गुस्ताख भार-तीय मेजर को जीता या मरा, जिस तरह से भी हो पकड़-कर लाओ। पकड़ने वाले को इनाम दिया जाएगा।

ले० कर्नल दयाल ने दर्रे पर विजय की कहानी इन शब्दों में कही—२६ अगस्त को रात ९।। बजे मैंने तथा मेरे साथियों ने सांक पहाड़ी पर हमला बोला। हम रात-भर चढ़ाई करते रहे। चोटी पर प्रातः सवा चार बजे पहुंचे। शत्रु की ओर से गोला-बारी होते हुए भी हम बढ़ते रहे। इसके शीघ्र बाद शत्रु भाग

गए। इसके बाद अगली पहाड़ी सारकी थी जो शत्रु के हाथ में थी। हमने इसपर प्रातः ६।। बजे कब्जा किया तथा एक और पहाड़ी लुडवाली गली पर दो घण्टे बाद हमारा कब्ज़ा हो गया। उस दिन हमने शाम छह बजे तक अपनी स्थिति मजबूत कर ली।

इसके बाद मैंने अपने कमाडिंग आफीसर से हाजी पीर पर चढ़ाई करने की अनुमति मांगी। अनुमति मिल गई और फिर आगे मार्च आरम्भ हुआ। शत्रु ने दो ओर से गोले बरसाए। मैंने शत्रु की तोपों का जवाब देने के लिए एक प्लाटून भेजी। मैं अपने शेष साथियो सहित हैदराबाद नाला तक शाम सात बजे पहुंचा।

शत्रु गफलत मे रहे। हमने अपनी योजनानुसार हमला किया और प्रातः १०।। बजे हमने दर्रे पर पूरी तरह से कब्ज़ा कर लिया।

इसी दिन दोपहर को पाकिस्तानी सेना के कप्तान मसूद और उनके सैनिक आए क्योंकि उन्हे पता ही नही था कि दर्रे पर हमारा कब्जा हो चुका है। उन्होने जल्दी ही आत्म-समर्पण कर दिया। हमने उनकी देखभाल की और जो कुछ खाना था, उन्हें भी दिया।

जैसी संभावना थी, शत्रु ने २६ अगस्त को जवाबी हमला किया। यह लड़ाई जोरो की रही और शत्रु को शाम ४।। बजे लौटना पडा। हमने भारी मात्रा में गोला-बारूद बरामद किया।

यह पूछे जाने पर कि क्या हमने शत्रु को एकाएक घेरा, ले० कर्नल दयाल ने कहा—पूरी तरह नही। शत्रु ने हमें दो दिन पहले साक में देखा था। उसने यह सोचा था कि मै पहाड़ी पर चढ गया हूं। लेकिन मैं पहाड़ी से उतरा और दूसरी पहाड़ी पर चढ़ा, जहां

से दर्रे की ओर लुढ़कते हुए पहुंच गया।

३७ वर्षीय ले० कर्नल दयाल होशियारपुर के हैं। उनकी नम्रता सबको आकृष्ट कर लेती है। अपने सैनिकों की बहादुरी की कहानी सुनाते हुए उन्होंने ज़रा-भी शेखी नहीं मारी।

मेजर रणजीतसिंह दयाल ने इस युद्ध में इस्तेमाल हुए पाक-हथगोलों की एक माला अपने गले में पहनने के लिए तैयार की। ठीक भी है, शत्रु के छीने हुए हथियार और बेकाम किए गए गोले ही तो इस वीर की शोभा थी। जब मेजर रणजीतसिंह ने उन गोलों की माला गले में पहन ली, तो उनके सब साथी हंसकर बोले—मेजर साहब, दिखता है आपके लिए परास्त पाक सेना एक अच्छी-खासी ट्राफी छोड़ गई है।

मेजर साहब गर्व से बोले—दोस्तो, मेरे द्वारा इस माला को धारण करने के कारण ही तो मियां अयूब को अपना अपमान अनुभव हुआ है। उन्होंने मेरा सर काटकर लाने वाले को पचास हज़ार इनाम देने की घोषणा की है।

मेजर साहब का एक सहयोगी बोला—भाई, इनाम तो अब तुम्हें मिलेगा। पकड़ने वाला तो अपनी खैर मनाए। हम उसका सर न तोड़ डालेंगे। भारत सरकार अपने वीरों की रक्षा और कद्र दोनों करने में समर्थ है।

मेजर दयाल को उनकी इस बहादुरी पर फौरन तरक्की मिली। उन्हें ले० कर्नल बना दिया गया और भारत सरकार ने उन्हें महावीर चक्र प्रदान करके सम्मानित किया।

कर्नल मेघसिंह है अजेय, वे प्रजातंत्र के प्यारे।
अत्याचारी जिनसे लड़कर मरते दम तक हारे॥

जब मेघ गरजा

उड़ी, पुंछ और छम्ब में पाकिस्तानियों के नापाक हौसलों को मटियामेट करने वालों में से कर्नल मेघसिंह का शौर्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है। पाकिस्तानियों की योजनाओं को नष्ट करके विजय पर विजय प्राप्त करते हुए कर्नल मेघसिंह गोलियों की घनघोर वर्षा करते हुए शत्रुओं पर छा गए थे। चार मोर्चों पर उनकी अद्भुत विजय इतिहास की एक अमर कहानी बन गई।

रणबांका ले० कर्नल मेघसिंह का जन्म राजस्थान की बिलण्डा तहसील के सरिया ग्राम में एक प्रसिद्ध क्षत्रिय खानदान

में हुआ है। वे द्वितीय महायुद्ध में भी लड़ चुके हैं। फिर १९६२ में चीनी आक्रमण के समय भी उन्होंने शत्रु के दांत खट्टे किए। जब १९६५ अगस्त में पाक ने चुपके-चुपके कश्मीर पर हमला बोल दिया तो मेघसिंह जी को मेजर बनाकर उड़ी-पुंछ क्षेत्र में रक्षा का काम सौंपा गया। जितने दिन युद्ध चला कर्नल मेघसिंह जी ने अपने चुने हुए रणबांकुरों के साथ शत्रु के नाकों दम करते रहे। उन्होंने चार मोर्चों पर शत्रु के ६०० जवानों को मौत के घाट उतार दिया और उनके शस्त्र-अस्त्र भंडार पर कब्ज़ा कर लिया। उनका व्यूह तोड़कर उनके आधार केन्द्रों पर गोली वर्षा की और उन्हें वहां से भागने पर मजबूर किया। मेघसिंह की इस बहादुरी पर भारत सरकार ने उन्हें ले० कर्नल बना दिया तथा वीरचक्र प्रदान किया। वह पाक सेना के लिए हौआ बन गए। २२ सितम्बर तक उन्होंने जिस तत्परता से अपना कर्तव्य निभाया उसकी कहानी न केवल रोचक ही है परन्तु भुजाओं को फड़का देने वाली भी है।

पहला मोर्चा

जब ५ अगस्त को पाक ने घुसपैठियों के वेश में कश्मीर की केसर-क्यारी पर हमला बोल दिया तो ले० कर्नल मेघसिंह अपने ब्रिगेडियर के पास गए और बोले—सर, मुझे उड़ी-पुंछ क्षेत्र में शत्रुओं को खदेड़ने का सुअवसर दिया जाए।

कुछ सोचकर ब्रिगेडियर बोले—'अच्छा, तुम अपनी पसन्द के जवान छांटकर ऐसी टुकड़ी बना लो जिनपर तुम्हें भरोसा हो। क्योंकि शत्रु के विरुद्ध पहली कार्यवाही के लिए विश्वासी,

सुदक्ष और प्रशिक्षित सैनिकों का होना बहुत जरूरी है।

मेघसिंह जी ने सोचा कि सामरिक दृष्टि से चुनी हुई छोटी टुकड़ी का सचालन ग्रासानी से हो सकेगा इसलिए उन्होंने ग्रपनी टुकड़ी में गोरखा, जाट तथा साठ के करीब देशभक्त मुस्लिम सैनिक छाट लिए।

हाजी पीर के दर्रे पर ले० कर्नल दयाल ने कब्जा कर ही लिया था; उसके दक्षिण-पूर्व मे तीन ग्रौर चौकियों पर भी कब्जा हो गया था। इस क्षेत्र का क्षेत्रफल १५० वर्गमील है ग्रौर यह उत्तर मे उड़ी तथा दक्षिण में पुंछ को जोड़ता है। यह हिस्सा कुछ ग्रागे को निकला हुग्रा है। यही से हमलावर कश्मीर घाटी तथा जम्मू पर हमला करने ग्राते रहे हैं। इस क्षेत्र में पाकिस्तान की बहुत-सी चौकियां, ग्रड्डे तथा सप्लाई डिपो भी थे।

कर्नल मेघसिंह ने सोचा कि पहले शत्रुग्रों के ग्रड्डे को नष्ट करने के लिए छापामार युद्ध किया जाए। नौ मील की दूरी पर पुछ सेक्टर की सीमा के उस पार एक पुल था, जिसपर से होकर पाक सेना व रसद उनकी चौकियों तक ग्राती थी। चौकियों पर शत्रु सेना का भारी जमाव था।

पाक सेना ने पहली सितम्बर को युद्धविराम सीमा पारकर छम्ब सेक्टर में हमला बोल दिया था। ले० कर्नल मेघसिंह ने १७ चुने हुए सैनिको को साथ लेकर रात के ग्रंधेरे में सात पाक चौकियां चुपके से पार की ग्रौर सामरिक महत्त्व का वह पुल नष्ट कर ४००-५०० गज़ के घेरे में बिखरकर छुपकर बैठ गए। जब शत्रुग्रों की ग्रोर से कुछ हलचल नहीं हुई तो सूर्योदय से पहले भारतीय टुकड़ी ग्रपनी चौकी पर वापस लौट ग्राई। शत्रु

को इस बात का कभी सपने में भी अहसास नहीं हुआ कि उसकी सात-सात चौकियां पार कर भारतीय वीर उनका आने-जाने का एकमात्र मार्ग नष्ट करके लौट भी जाएंगे।

दूसरा मोर्चा

ले० कर्नल मेघसिंह ने बताया कि अपने पहले मोर्चे में आशातीत सफलता मिलने के कारण हम सबके हौसले बुलन्द हो गए। मेरे जवान शत्रुओं के सब प्रयास विफल करने के लिए उतावले हो रहे थे। सौभाग्य से जल्द ही हमें दूसरे मोर्चे पर जाने का मौका भी मिल गया। ६ सितम्बर को हमें पुंछ के उत्तरी युद्धविराम रेखा से चार मील दूर शत्रु की चौकी पर हमला करने का आदेश प्राप्त हुआ। उस चौकी पर बहुत अच्छे बंकर थे और चालीस शत्रु-सैनिक उसकी रक्षा कर रहे थे।

संध्या के बाद मैंने अपने साठ कायमखानी जवानों की टुकड़ी साथ ली और अपने-आपको बचाते-बचाते सूर्योदय से पूर्व हम उस चौकी के निकट पहुंच गए।

हमारा वहां पहुंचना ही था कि शत्रु ने मशीनगनों और राइफलों की बाढ़ से हमारा स्वागत किया। मैंने परिस्थिति की भयंकरता को समझकर अपने दस जवानों को हुक्म दिया कि वे चौकी के पीछे के रास्ते को जाकर रोकें और बाकी को लेकर मैंने सामने से चौकी पर हमला बोल दिया।

शत्रु ने मुझपर भी निशाना साधा किन्तु मैं तो नहीं मरा एक जवान घायल हो गया। इस घमासान युद्ध में २० पाकि-

स्तानी सैनिक घायल हुए। दो को हमारे जवानों ने जिन्दा पकड़ लिया और दो दोजख रसीद कर दिए गए। हमने उस चौकी पर कब्जा कर लिया। शेष पाकिस्तानी भागते नहीं तो क्या करते ?

सूरज देवता ऊपर उठे। हमको अपने सूत्रों से ज्ञात हुआ कि दो मील दूर एक और पाकिस्तानी चौकी है जिसपर यदि पूरी बटालियन की शक्ति न हो तो अधिकार पाना तथा पहली चौकी को बचाए रखना बड़ा कठिन है।

मैंने निश्चय किया कि शत्रु को धोखा देकर उसपर आक्रमण किया जाए और यही बाद में सर्वोत्तम स्थिति सिद्ध हुई।

ले० कर्नल मेघसिंह ने बड़ी सूझ-बूझ का परिचय दिया। उन्होंने युद्धनीति से काम लिया और शत्रुपक्ष में यह भ्रान्ति उत्पन्न कर दी कि भारतीय सेना संख्या में पाक सेना की तुलना में चौगुनी है और मौका पाते ही वह जोरदार हमला कर देगी। मेघसिंह जी ने उस चौकी पर पहाड़ी पर चढ़कर तीन सौ गज़ की दूरी से जोर-जोर से भारत माता की जय के नारे लगाए। शत्रु ने समझा कि यह टुकड़ी तो अपनी विजय के नारे लगा रही है और बाकी ने हमें बुरी तरह घेर लिया है। बस, वे घबराकर सिर पर पांव रखकर भागे। बाद में भारतीय टुकड़ी को काफी गोला-बारूद और राइफलें हाथ लगीं।

ले० कर्नल मेघसिंह ने कहा कि इस विजय से हमारे हौसले और बढ़ गए। उड़ी-पुंछ क्षेत्र पर कब्जा हो जाने के बाद हमलावरों का यह अड्डा समाप्त हो गया। शत्रुओं की सप्लाई

लाइन कट चुकी थी। हमारे ब्रिगेड कमाण्डर के पास जब इन दो पोस्टों की विजय का समाचार पहुंचा तो वे उसपर सहसा विश्वास नहीं कर सके। हम मुट्ठी-भर लोग और पाकिस्तान के अधुनातन शस्त्रास्त्रों से संरक्षित दो चौकियां! किन्तु जब उनको हमारी विजय का निश्चय हुआ तब वे प्रसन्नता से गद्-गद हो उठे।

तीसरा मोर्चा

कहते हैं विजय जवानों को युद्ध का उन्माद पैदा कर देती है। इसी उन्माद के वशीभूत होकर वे खतरे की परवाह न करते हुए, प्राण हथेली पर रखकर आगे बढ़कर मोर्चा लेते हैं। ८ सितम्बर को उड़ी-पुंछ से लगे हाजी पीर दर्रे के पास के एक आधार क्षेत्र को भी भारतीय सेना ने उड़ा दिया। वहां से भी शत्रु सेना दुम दबाकर भागी। मेघसिंह ने अपने ब्रिगेड कमाण्डर से कहा—सर, यह मौका है कि हम उड़ी-पुंछ इलाके को हाजी पीर दर्रे से मिला लें। यदि मुझे एक और दस्ते की मदद मिल जाए तो मैं यह भी कर दिखा सकता हूं।

पहले दो मोर्चों पर ले० कर्नल मेघसिंह ने जो कर दिखाया था उससे ब्रिगेडियर का विश्वास और बढ़ गया था। उन्होंने फौरन फौज का एक बढ़िया दस्ता मेघसिंह के अधीन कर दिया। इधर हाजी पीर दर्रे की ओर एक भारतीय टुकड़ी पहले से ही मौजूद थी। ले० कर्नल मेघसिंह अपनी टुकड़ी लेकर उनसे मिलने के लिए आगे बढ़े। अभी इन्हें कूच किए कुल दो-ढाई घण्टे ही हुए थे कि शत्रु को कुछ सन्देह हो गया। जैसे ही भारतीय टुकड़ी

ने एक नाला पार किया कि शत्रु की तोपें इनपर आग उगलने लगी।

ले० कर्नल मेघसिंह ने अपने जवानों को ललकारकर कहा—साथियो, अब तो सामना हो ही गया। ओट लेकर जम जाओ, और शत्रु की तोपों का मुह फेर दो।

भारतीय शूरवीर जवानों ने जमकर मोर्चा लिया। चार घण्टे तक भयानक युद्ध हुआ। १५० पाक सैनिक मौत के घाट उतार दिए गए। शत्रु की बाकी सेना दुम दबाकर भागी। मेघसिंह ने मशीनगनों से लैस उस पुल पर रात को ही कब्जा कर लिया। अब तो उनकी स्थिति और भी मजबूत हो गई थी। उन्होंने बताया कि १० सितम्बर का दिन हमारे युद्ध के इतिहास का स्वर्णिम दिवस था। अपने बत्तीस जवान को मैंने इस पुल तथा पहाड़ियो की रक्षा का भार सौंपा और उसी दिन दस बजे उड़ी-पुंछ क्षेत्र का सम्बन्ध हाजी पीर से स्थापित हो गया। चामुण्डा की कृपा से मेरी एक बहुत बड़ी अभिलाषा पूरी हुई।

छम्ब का मोर्चा

एक सप्ताह तक तो ऐसे ही छुटपुट हमले होते रहे। उसके बाद छम्ब के मोर्चे पर युद्ध हुआ। यहां पर शत्रु की पहले से ही तैयारी थी। उनकी संख्या में भारतीय फौज कम थी, परन्तु ले० कर्नल मेघसिंह ने एक बार फिर चाणक्य नीति से काम लिया। उन्होंने बताया—१९ सितम्बर की रात हमारे लिए निर्णायक थी। रात को ४॥ बजे हम ६ मील की दूरी लांघकर जोरियां के

उत्तर-पूर्व में शत्रु के तोपखाने के आधारस्थल पर दस गज़ दूर जा पहुंचे। मेरी इस टुकड़ी में ३५ जवान थे। शत्रु ने उनको ललकारा। मेरे जवानों ने, जो अधिकांश कायमखानी और कुमायूंनी थे, अपना मोर्चा बांधा। मैंने उनको गोली न चलाने का आदेश दिया। मैं शत्रु को धोखा देना चाहता था कि भारतीय सेना बहुत अधिक है। मैं इसमें सफल हुआ।

बनावटी आदेश के स्वरों में मैंने दृढ़ता से आदेश दिया—चार्ली कम्पनी दाहिनी ओर से नाले की ओर बढ़ो और शत्रु पर पीछे से हमला बोलो। मेरी आज्ञा पर कैप्टेन ने तुरन्त आदेश दिया—'यस सर'।

पुनः मैंने डेल्टा कम्पनी को बायीं ओर से नाले पर बढ़ने और धावा बोलने को कहा और कैप्टेन ने 'यस सर' कहकर स्वीकार किया। मैंने इसी प्रकार एक अन्य कम्पनी को पीछे रहकर चलने का आदेश दिया।

मेरे इन आदेशों की प्रतिक्रिया स्पष्ट थी। शत्रु ने नाले के दाईं-बाईं ओर डटकर गोलाबारी करना प्रारम्भ कर दिया।

शत्रु की आर्टिलरी की शक्ति को दायें-बायें बेकार होते देख हमने यही उचित समझा कि हम दुबके रहें। किन्तु सूर्योदय से १५ मिनट पूर्व हम अकस्मात् शत्रु के घेरे में आ गए। तब हमारे सामने केवल एक ही चारा था : 'लड़ें' और 'मरें'।

इसी समय हमारे दूरवीक्षण यंत्रधारी सैनिक ने सूचना दी कि पाकिस्तानी कमाण्डर दिखाई दे रहा है। मैंने तत्काल उसको सीने में गोली मारने का संकेत किया और हमारे अचूक निशाने के धनी जवान ने वही किया। पाक कमाण्डर धराशायी हो गया।

और शत्रुदल में भगदड़ मच गई।

हमने अपनी छोटी-सी टुकड़ी से उस मोर्चे पर सूर्योदय होते-होते अधिकार कर लिया। ३०० पाक सैनिक खाइयों तक से भाग खड़े हुए।

मोर्चे के निरीक्षण में ज्ञात हुआ कि केवल १०० गज की दूरी पर एडमबेस और मोर्टारों का ठिकाना है। मैंने अपने स्नाइपर सैनिक को कहा कि कोई उन आधार-स्थलों की ओर बढ़े उसीको गोली मार दो। उस बहादुर स्नाइपर जवान ने एक-एक कर ४५ पाक सैनिकों को अपनी गोली का निशाना बनाकर पितरों का तर्पण किया।

शत्रु ने हमको वहां से खदेड़ने के लिए तीन बार तीन सौ सैनिकों के साथ आक्रमण किया किन्तु हम ऊंचाई पर थे—मोर्चे लगाए हुए थे और शत्रु मैदान में था अतएव उसके सारे प्रयत्न विफल रहे।

सारी रात लड़ाई होती रही। शत्रु की कमर पूरी तरह से टूट गई थी। उनके ६० सैनिक मारे गए थे। ८० घायल हो गए थे। बाकी भाग गए थे। भारतीय सेना ने उनके शस्त्राधार नष्ट कर दिए। २१ सितम्बर को ले० कर्नल मेघसिंह को हुक्म मिला कि शत्रु के शस्त्रास्त्र भंडार को पूरी तौर पर नष्ट कर दिया जाए। दूसरे दिन अपने चुने हुए जवानों को लेकर मेघसिंह जी सुबह चार बजे ही मौके पर पहुंच गए। वहां तीन सौ पाक सैनिक पहले से हमले के लिए तैयार थे। यह शस्त्र भंडार अखनूर के उत्तर-पश्चिम में था। यहां पर भारतीय सेना ने पाक सैनिकों को लोहे के चने चबवाए और पाक गोलाबारी की

बिल्कुल भी परवाह न करती हुई भारतीय टुकड़ी आगे बढ़ती चली गई। ले० कर्नल मेघसिंह अपनी फौज को बराबर ललकारते रहे—बढ़ो जवानो। आगे बढ़ो। शाबाश ! शाबाश !! फतह हमारी है।

एक शत्रु सैनिक ने मशीनगन का एक बर्स्ट मेघसिंह जी के कन्धे पर मारा और एक गोली उनकी जंघा पर लगी। उनकी उंगलियां भी घायल हो गईं। घावों से रक्त बहने लगा। पर अपनी चोट की परवाह न कर वे अपने जवानों का हौसला बराबर बढ़ाते रहे। नतीजा यह हुआ कि शत्रु के दो अन्य आक्रमण भी व्यर्थ कर दिए गए और उस चौकी पर भारतीय टुकड़ी का अधिकार हो गया। छः घण्टे तक घमासान युद्ध हुआ। शत्रु सेना के पांव उखड़ गए। अपनी-अपनी जान बचाकर वे सब भाग खड़े हुए। हार से खिसियाकर एक पाक कैप्टेन ने चिल्लाकर ललकारा—असली बाप की औलाद हो तो सामने आकर लड़ो, काफिरो ! क्या छुप-छुपकर गोलियां चला रहे हो।

एक राजपूत के लिए ललकार काफी थी। यद्यपि उत्तेजना के वशीभूत होकर सामने आना युद्धनीति के विरुद्ध था परन्तु राजपूती शान इस ललकार को बर्दाश्त नहीं कर सकी। मेघसिंह ने आदेश दिया—जवानो, बढ़ो ! बढ़-बढ़कर शत्रुओं को गाजर-मूली की तरह काट डालो।

अपने नेता से बढ़ावा पाकर भारतीय जवान शेर की तरह शत्रु पर टूट पड़े। ६० पाकिस्तानी जवान खाइयों में मरे पाए गए। ५०-६० घायल पड़े कराह रहे थे। वह अभागा कप्तान जिसने भारतीय वीरों को काफिर कहकर ललकारा था उसकी

तोप भी एक खाई में पड़ी थी। शत्रु की राइफलें भी भारतीय जवानों के हाथ लगीं।

यह अद्भुत विजय प्राप्त करके ले० कर्नल मेघसिंह वापस अपने ब्रिगेडियर के पास सफलता की सूचना देने उसी दिन लौट आए। ब्रिगेडियर ने उनकी पीठ ठोककर कहा—शाबाश, मेजर! तुमने भारत मां का सर ऊंचा किया।

विनम्रता के साथ मेघसिंह बोले—सर, यह विजय हमारे जवानों के अदम्य साहस और अपरिमित शौर्य की है जिसने शत्रु के सभी शस्त्रों और इरादों को नाकामयाब कर दिया।

जीवन-भर जो रहा खिला ही, नहीं गोत से हारा।
श्री खुशवन्त सिंह ने मरते दम तक था संहारा॥
वीर पुत्र ने सब कुछ देकर, मां की ममता जानो।
दुश्मन के छक्के छूटे थे; सबने सुनो कहानी॥
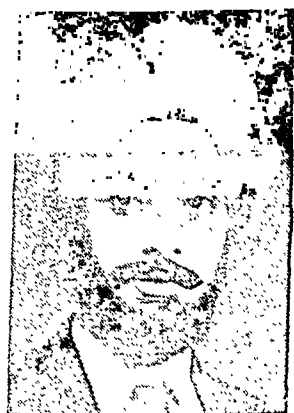
डेरा बाबा नानक की अमानत

डेरा बाबा नानक के गुरुद्वारे में आज बड़ी भीड़ है। गुरुपर्व का दिन है। गुरु के भक्तों की भीड़ लगी हुई है। लोग आते हैं, अरदास करते हैं और श्रद्धा से नतमस्तक हो, अपनी आस पूरी होने की उम्मीद लेकर लौटते हैं।

एक ५० बरस की आयु की सिख महिला अरदास कर रही है—हे गुरु महाराज, बड़ी उम्मीद से आपके दरबार में आई हूं। तूने मुझे चार दोहतियां (नातिनें) दीं। मेरी अरजोई (प्रार्थना) है कि एक लड़का मेरी बेटी को ज़रूर दे दे। ताकि उसकी आस-मुराद पूरी हो। कुल की बेल बढ़े, बहनों को भाई मिले। मैं सुखना

मुखदी (मानता मांगती) हूं कि यदि लड़का हुआ तो तेरी अर-दास करने के लिए फिर दरबार में आऊंगी।

दूसरे बरस ही वह महिला अपनी बेटी और जमाई सरदार ज्ञानसिंह के साथ एक नन्हे शिशु को लेकर अपनी मानता पूरी करने आई। यह है उस होनहार युवक खुशवन्तसिंह के जन्म की कहानी, जिसे नानी तथा मा-बाप और बहनों ने बड़े लाड़-चाव से पाला था। बचपन से ही वह बड़ा चतुर, चंचल, खेल-कूद में दिलचस्पी लेनेवाला और बड़ा निडर था। मा चेतावनी देती, नानी बलैया लेती, बहनें प्यार से झिड़कती कि ऐसे खतरों के खेल मत खेला कर पर बालक खुशवन्त खिलखिला कर हंसता रहता। और कहता मैं किसीसे नहीं डरता। मैं भी क्या लड़की हूं जो मां की गोद में छिपकर बैठ जाऊं।

पिता यह सब सुनते तो हंस देते।

खुशवन्त के पिता सरदार ज्ञानसिंह जी रेफरी के रूप में भारत मे ही नहीं अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में भी ख्याति प्राप्त कर चुके हैं। अपने योग्य पिता की ट्रेनिंग में रहकर खुशवन्तसिंह का एक चतुर खिलाड़ी बनना स्वाभाविक ही था। वह एक नामी बापका लायक बेटा था। पढ़ाई के साथ-साथ ही खुशवन्त ने स्कूल में ही खेल-कूद में नाम कमाया। दोनों वर्ष ही अन्तर स्कूल प्रतियोगिता में उनका स्कूल ही विजयी हुआ। वह अपने स्कूल की टीम का कप्तान रहा। अन्तिम वर्ष वह दिल्ली स्कूल टीम के उप कप्तान भी रहा।

स्कूल की पढ़ाई खतम करने के बाद खुशवन्तसिंह ने हिन्दू कालेज में प्रवेश लिया। वह दिल्ली विश्वविद्यालय की हाकी

टीम के चार वर्षों तक सदस्य
लखनऊ विश्वविद्यालय की अ
एक वर्ष तक हिन्दू कालेज क
राजधानी की विजेता टीम
के रूप में खेलता था।

१९६३ में खुशवन्तसिंह
कार्यकुशलता और प्रशासनिक
सफल अफसर के रूप में लोक
में जाने के पूर्व वह हाकी में
था। वह एक अच्छे सेंटर फा
फुटबाल का अच्छा रेफरी भी

बेटे की खेल में ऐसी प्र
तो यह कल्पना की थी कि उ
तरह 'कोच' और रेफरी बनेगा
मां से कहा—मां, मैं जब खेल
सब जने उंगली उठाकर यही
सिंह का लड़का खुशवन्त क्या
किस बाप का बेटा है।

मां ने खुश होकर कहा—
कुशल खिलाड़ी और रेफरी
चाहिए। नामी बाप का बेटा

बेटे ने कुछ देर चुप रहक
बाबू जी पर तो मुझे भी अभि
दिखाना चाहता हूं कि बाबू ज

रहा। इसके बाद वह कुछ दिनों तक
र से भी खेलता रहा। खुशवन्तसिंह
ो टीम का कप्तान भी रहा। वह
इंडिपेंडेंट इलेवन में सेण्टर फारवर्ड

सेना में भर्ती हो गया और अपनी
दक्षता के फलस्वरूप सेना के एक
प्रिय हो गया। इमरजेंसी कमीशन
ी काफी प्रसिद्धि प्राप्त कर चुका
रवर्ड होने के साथ-साथ हाकी और
था।

गति और रुचि देखकर ज्ञानसिंह ने
नका बेटा भी खेल-कूद में उनकी ही
ा। पर एक दिन खुशवन्त ने अपनी
के मैदान में विजय पाया करता हूं,
कहते हैं, वह देखो सरदार ज्ञान-
कमाल दिखा रहा है। आखिरकार

—ठीक तो है बेटा, तुम्हारे बाप एक
। इससे तो तुम्हें खुश ही होना
भी नामी बनेगा।

र मुसकराते हुए कहा—मां, अपने
मान है, पर मैं भी कुछ ऐसा कर
ो को मुझपर भी अभिमान हो और

लोग यह कहें, वह देखो बहादुर खुशवन्त के पिता ज्ञानसिंह जी जा रहे हैं। मां, वह बेटा किस काम का जिसके कारनामों के कारण उसका कुल ऊंचा न उठे; जो केवल बाप की ख्याति में ही फले-फूले।

मां ने अभिमान से अपने बेटे की ओर देखा और समझ गई कि बेटे ने कुछ कर दिखाने की ठान ली है। बहुत जल्द ही खुशवन्त को मौका भी मिल गया। वह मिलिटरी ट्रेनिंग के लिए चुन लिया गया। ट्रेनिंग खत्म करके १९६४ जनवरी को उसे कमीशन भी मिल गया। वह गुरखा राइफल्स में भर्ती हो गया।

जब वह अपनी ड्यूटी पर जाने लगा तो मा उसे गुरुद्वारे माथा टिकाने ले गई। खुशवन्त ने देखा अरदास करते समय मां रो रही है। गुरुद्वारे में उस समय गुरु गोबिन्दसिंह के बेटों के बलिदान की कथा चल रही थी। जब मा-बेटे बाहर आए तो खुशवन्त ने कहा—मा, तुमने गुरुद्वारे में यह शब्द सुने 'अति ही रण में जूझ मरूं'? कितनी सुन्दर वाणी थी। भाग्यवानों को ही युद्धक्षेत्र में बहादुरी के साथ लड़ते हुए मौत नसीब होती है। मैं भी ऐसी ही मौत की कामना करता हूं।

ममतामयी मा ने बच्चे को बरजते हुए कहा—बेटा, ऐसी अशुभ बात क्यों कहता है? भगवान करे तू सौ बरस जिए। गुरु महाराज तेरा राखी होय।

खुशवन्त ने हंसते हुए कहा—मा, मरना तो एक दिन सबको है। पर खटिया पर पडकर मरना भी कोई मरना है। जवान आदमी किसी रोग या दुर्घटना में भी मर जाते हैं, वैसी मौत तो मैं नहीं चाहूंगा।

ट्रेनिंग के तुरन्त बाद उसे नेफा भेज दिया गया। ६-१० महीने तो वह वहां रहा। उसके बाद १६६५ की गर्मी में उसे डेरा बाबा नामक में रखा गया। वहां हालत कुछ सुधरी तो खुशवन्त को अम्बाला बुला लिया गया। वह अपनी रेजीमेंट की फुटबाल टीम का कोच और गोल कीपर भी था। हाकी में भी उसने अपनी रेजीमेंट की टीम को ट्रेनिंग दी थी। पाक हमले से कुछ सप्ताह पहले इंटर गोरखा राइफल्स टूर्नामेंट देहरादून में होना तय हुआ। टीम को रवाना करने से पहले यह स्पष्ट कर दिया गया था कि लड़ाई यदि शुरू हो गई तो तुम लोगों को फौरन लौटना होगा। क्योंकि खुशवन्त अपनी बटालियन की फुटबाल टीम का रेफरी, कोच और गोलकीपर भी था, इसलिए उसे भी जाने का आदेश मिला। पर अपनी टीम की विजय से भी अधिक उसे शत्रु पर अपने देश की विजय की चिन्ता थी। वह देख रहा था कि सीमा पर युद्ध के बादल घिरे चले आ रहे हैं। इसलिए उसने अपने आफिसर से कहा—सर, मुझे तो आप सीमा पर भिजवा दें। मेरे बिना भी टूर्नामेंट का काम चल ही जाएगा। इन्हें 'कोच' करने का काम तो मैंने पूरा कर दिया है। अब रहा रेफरी और गोलकीपर का काम, उसके लिए कोई दूसरा भी चुना जा सकता है।

से० ले० खुशवन्तसिंह का विचार था कि केवल खेल में चमकने के लिए तो मैं फौज में भर्ती नहीं हुआ। मेरा उद्देश्य तो देश की रक्षा करना है। मैं तो कुछ करके दिखाना चाहता हूं।

खेल की तरह वह सेना में भी खतरे का काम संभालने को अधिक उत्सुक रहता था। उसकी हिम्मत और जिम्मेदारी

निभाने की योग्यता देखकर अफसर ने उसे पेट्रोलिंग ड्यूटी पर लगाया।

एक बार युद्ध के मैदान में जब वे लोग ट्रेंचिग में बैठे हुए थे, तो दूर से ४ पाकिस्तानी आते हुए दिखाई दिए। उसके सूबेदार ने हुक्म दिया—फ़ायर करो। पर खुशवन्तसिंह ने कहा कि फायरिंग की कोई जरूरत नहीं है, उनको पास आने दो। क्योंकि यदि शत्रु जीता पकड़ लिया जाए तो उससे बहुत कुछ पता लग सकता है। जब वे नजदीक आ गए तो खुशवन्तसिंह ने अचानक घेरा डालकर उनके 'हैण्ड्स अप' करा लिए और उनको बन्दी बना लिया। फिर उन्हें बेस कैम्प में खुद ले गया। उसके लिए आफिसर ने उसकी पीट ठोकी।

उसे थका हुआ देखकर उसके कर्नल ने उससे कहा भी कि तुम्हें कई दिन हो गए, तुम थक गए हो, अब तुम आराम करो। मैं दूसरे को पेट्रोलिंग ड्यूटी पर भेज देता हूं, लेकिन खुशवन्तसिंह को तो काम की लगन थी वह आराम हराम में विश्वास करता था। उसने मना कर दिया और मोर्चे पर फिर चला गया। उसने वहां से अपने पिता को लिखा कि हम तो शत्रु से मुठभेड़ के लिए उतावले हुए बैठे हैं। हमारे जवान तो रोज गाते हैं 'मेरी बाकी बंदूक और तेरे डरपोक सीने का बोल दुश्मन बोल सगम होगा कि नहीं'। डैडी, अभी तो कुछ खास मजा नहीं आया। मेरी इच्छा तो यह है कि शत्रु के साथ ज़रा दो-दो हाथ हो जाएं। हम लोगों की भुजाएं फड़क रही हैं।

उसके मन में सदा यह रहता था कि मैं कुछ करके दिखाऊं। यदि वह चाहता तो देहरादून चला जाता। अपनी ड्यूटी करने

के बाद उसे पीछे रहने के कई मौके मिले लेकिन वह हर बार टालता रहा और मोर्चे पर डटा रहा।

इण्टरव्यू के दौरान मुझे ज्ञानसिंह जी ने बताया कि मेरा बेटा तो सच्चे अर्थ में बहादुर था। वह आगे बढ़कर खतरे को वरण करने वालों में से था। पर उसे एक बात का खटका रहता था कि यदि मैंने युद्ध में वीर गति प्राप्त की तो मेरी माताजी को मेरी असामयिक मृत्यु का बहुत धक्का लगेगा। इसलिए वह जब भी छुट्टी में आता अपनी मां को इस धक्के के लिए तैयार करता रहता था। उन्हें तसल्ली देता रहता। खुशवन्त का एक छोटा भाई भी था। पर मां की ममता बड़े पर अधिक थी क्योंकि वह परदेश जो रहता था। एक बार खुशवन्त जब छुट्टी पर घर आया तो एक दिन उसने अपनी माता से कहा—मां, यदि किसीके दो आंखों में से एक आंख चली जाए तो वह क्या करे।

इसपर माता ने सहज ही कहा—बेटा, वह बेचारा एक से ही गुज़ारा करेगा। लाचारी में और हो भी क्या सकता है। सब्र करके रह जाएगा।

इसपर उसने कहा—मां, तुम इसी प्रकार तसल्ली किया करो कि अगर मैं रण में काम भी आ गया तो तुम्हारे पास एक लड़का और है। तुम फिर भी भाग्यशाली हो। सोचो, जिन मांओं का एक ही बेटा देश के काम आ गया, उनसे वे तो अधिक सुखी हैं जिनके दो बेटे हैं।

मां ने खुशवन्त की पीठ पर हाथ फेरते हुए कहा—बच्चा, तू ऐसा मत कहा कर। हाथ में जितनी उंगलियां हैं, वे सभी प्यारी होती हैं। जिसमें भी कंडा (कांटा) लगे दुखता है।

बेटे ने देखा और समझा कि मां तो ममतामयी है। मां का ऋण नहीं चुक सकता। वह तो जीती ही बच्चों के लिए है। पर मेरी एक और महान मां भी तो है जिसकी गोद में हम पले हैं। उसका ऋण भी तो चुकाना है। भला भारत मां के बेटे मौके पर उसकी रक्षा से कैसे मुह चुरा सकते है।

डेरा बाबा नानक में युद्ध पूरे जोरों पर था। भारतीय सेना के पेट्रोलिंग आफिसर शत्रु की हलचल का सारा समाचार अपनी पीछे की चौकियों को पहुंचा ही रहे थे। जोरों की गोलाबारी हो रही थी। भारतीय सैनिक थोडी-थोड़ी दूरी पर ट्रेंचिज में दुबके बैठे शत्रु की आहट ले रहे थे। खुशवन्तसिंह भी एक ट्रेंचिज में था। ट्रेंचिज के अन्दर गर्मी काफी थी। इतने में उसके पडोसी अफसर ने वायरलैस से उसे सूचना दी कि वह बहुत प्यासा है, उनके पास पानी खत्म हो गया है पानी चाहिए। खुशवन्तसिंह ने उसे सूचना दी कि मेरे पास पानी तो है पर किसी जवान को भेज दो वह पानी ले जाएगा। इसपर पडोसी अफसर ने कहा कि इस गोलाबारी में कोई जवान आने को तैयार नही है और कोई भी खाई से बाहर निकलना नही चाहता। प्यास के मारे मेरा बुरा हाल हो रहा है। उफ!

इसपर खुशवन्तसिंह स्वयं ट्रेंचिज से निकला और उस भीषण गोलाबारी में अपने पड़ोसी अफसर के पास पहुचा और उसे पानी पिलाया तथा उसको हर प्रकार से धैर्य बंधाया। उससे बात करके वह फिर अपनी ट्रेंचिज में चला आया। इस प्रकार उसने अपनी जवामर्दी से अपने साथी अफसर की जान बचाई।

उसके साथी ने बाद में एक पत्र में सरदार ज्ञानसिंह को लिखा कि खुशवन्तसिंह ने ऐन मौके पर शत्रु के टैंकों को नष्ट करके न केवल अपने बटालियन के अनेक जवानों को ही बचा लिया परन्तु मौके पर दूरदर्शिता और बहादुरी दिखाकर उसने बटाला शहर की भी उस दिन रक्षा कर ली। इसके लिए हम सब उसके प्रति आजीवन ऋणी रहेंगे। खुशवन्त का यह साथी जिसे वह प्यार से पौमी कहता था और वह भी खुशवन्त को खुशी कहता था, उस दिन उसीके साथ खाई में था। शत्रु के गोले से एक स्प्लिण्डर निकलकर पौमी के लग गया तो खुशी ने फौरन उसे संभाला। पर क्योंकि सामने शत्रु बढ़ता चला आ रहा था और टैंक का दैत्य मुंह फाड़े भारतीयों को निगल रहा था पौमी ने खुशवन्त को कहा—दोस्त तुम शत्रु को संभालो। मैं ठीक हूं।

इस प्रकार खतरे के मुंह में भी खुशवन्त ने इन्सानियत को नहीं भुलाया। जहां भी उसकी ज़रूरत पड़ी वह हमेशा सीना ठोककर मदद के लिए पहुंच जाता था। अपनी बटालियन में वह बहुत लोकप्रिय था। इसका एक खास कारण यह भी था कि वह हरएक का हमदर्द दोस्त था। अपनी ओर से भरसक मदद करने से वह पीछे नहीं हटता था।

सरदार ज्ञानसिंह ने बताया कि मुझे तो यह विश्वास था कि खुशवन्त देहरादून में मैच खेल रहा होगा। क्योंकि ता० १० को जब मैं अचानक अम्बाले पहुंचा तो उसके रेजीमेंट के खिलाड़ी मुझे अम्बाले स्टेशन पर मिले। मेरी उत्सुक आंखें खुशवन्त को ढूंढ़ने लगीं। तब उसके एक साथी ने बताया कि खुशवन्तसिंह तो खेलने गया ही नहीं, वह तो डेरा बाबा नानक

के फन्ट पर है। ग्राप देखिएगा उसकी तो जल्द तरक्की होगी। उससे ग्रफसर बेहद खुश हैं।

मैं घर ग्राया तो उसकी मां से बोला--हमारा बेटा डेरा बाबा नानक पहुंच गया है। मैं उसके एक साथी से ग्रम्बाले में मिला था। वह बता रहा था कि खुशवन्त से उसके ग्रफसर बड़े खुश हैं। उसकी बड़ी सराहना करते हैं। ग्रौर एक बार तो कमाण्डर ने यहां तक कह दिया था कि जितने भी इस बटालियन में सेकण्ड ले० हैं उन सब में खुशवन्त पर ही हमें विशेष उम्मीद है। उसमें एक बहादुर ग्रफसर बनने के सभी गुण ग्रौर खूबियां हैं।

इसके बाद खुशवन्त की कई दिनों तक कोई खबर नहीं मिली। ग्रखबारों से ही यह पता चलता रहा कि डेरा बाबा नानक पर खूब घमासान युद्ध हो रहा है। भारतीय सेना वहां पुल पार करने की कोशिश में है ग्रौर शत्रु उन्हें पीछे धकेलने की कोशिश कर रहे हैं। एक दिन अचानक दुश्मनों ने कई टैंकों के साथ हमला बोल दिया। खुशवन्त टैंकों से घिर गया परन्तु उसने हिम्मत नहीं हारी। जब गोलियां खत्म हो गईं तो उसने हथगोले लेकर शत्रु के टैंकों पर हमला बोल दिया। ग्रन्त में वह रणभूमि में लड़ते हुए वीर गति को प्राप्त हुग्रा।

ग्रपने बेटे की बहादुरी का वर्णन करते हुए सरदार ज्ञानसिंह का दिल भर ग्राया। क्षण-भर ग्रपने को संभालकर वह बोले—मुझे ग्रपने बहादुर बेटे पर गर्व है। वह ग्रपना कर्तव्य पालन करते हुए मातृभूमि की वेदी पर कुर्बान हो गया। खुशवन्त ने

जो कहा था कर दिखाया। वह अपनी जान की परवाह किए बिना दुश्मन को कमर तोड़ने में तत्पर रहा। दुश्मन के दो टैंकों को नष्ट करने में उसका बड़ा हाथ था। मुझे तो उसके बलिदान का समाचार चार दिन बाद मिला। पहले तो यही सुनने में आया कि खुशवन्तसिंह लापता है। शायद शत्रु ने उसे बन्दी न बना लिया हो। पर मेरा मन कहता था कि सिंह भी कभी गीदड़ों के बन्दी बने हैं? मेरा शेर बेटा ज़रूर जान पर खेल गया है। वह तो बाबा नानक की अमानत थी गुरु महाराज ने उस अमानत को वापस ले लिया है।

भारी खोज के बाद खुशवन्त का शव क्षत-विक्षत अवस्था में एक झाड़ी के नीचे मिला। उसके परिवार को उसका झोला, साफा और अस्थियां ही मिल पाईं। शोकातुर ज्ञानसिंह इन अस्थियों को सतलज में प्रवाहित करने के लिए आनन्दपुर ले गए। बहादुर खुशवन्त गुरु का प्यारा हो गया।

अन्त में सरदार ज्ञानसिंह ने सजल नेत्रों से बताया—मुझे जब आकाशवाणी पर अपने खुशवन्त के विषय में कहने के लिए बुलाया गया तो मैंने कहा—मैं खिलाड़ी ज्ञानसिंह नहीं बोल रहा हूं, परन्तु बहादुर खुशवन्तसिंह के बाप की हैसियत से आज आप सबको अपने देशभक्त बेटे के विषय में बताने आया हूं जो कि बचपन से ही मातृभूमि पर बलिदान होने के सपने देखा करता था। मुझे खुशी है कि उसने न केवल हमारे कुल का परन्तु अपने देश का भी माथा ऊंचा किया।

जिस खेल में यह लगता है इसको ऐसी यारी,
भवसागर के पार देखने की कर ली तैयारी।
लेकिन यहीं स्वर्ग में जाकर उसे मिलेगा अवसर,
और जन्म लेगा भारत में जलपरी बन कर॥

यह वीर तैराकी

—उठ बेटा, पांच बज गए हैं।

—ऊं, ऊं सोने दो।

—क्यों उसे सुबह-सुबह ही जगा रही हो, दिन भर तैरता है थक जाता है। सोने दो—पिता ने मां को टोकते हुए कहा।

—अजी उसने खुद ही तो मुझे कहा था कि सुबह पांच बजे उठा देना। अलार्म लगाकर सोया था। अलार्म बज भी गया पर इसकी नींद ही नहीं खुली। वह देखिए बाहर उसकी पलटन के तैराकी आ भी गए हैं। अब ?

यह सुनकर टिप्पू चौंककर उठ बैठा। काम में बेपरवाही या

सुस्ती उसे कतई पसन्द नहीं थी। उसने खिड़की का पर्दा उठाकर साथियों से कहा—अन्दर आ जाओ। आओ एक-एक कप चाय पी लो। तब तक मैं अभी तैयार होता हूं। बस दस मिनट लगेंगे।

पिछले माह उसे जब ड्यूटी पर बुलाया गया, वह राजपूताना राइफल्स तैराकों के साथ माडर्न स्कूल तालाब में गहन प्रशिक्षण प्राप्त कर रहा था।

टिप्पू जिसका असली नाम किरण सेठ था विंग कमांडर सेठ का इकलौता बेटा था। दो बहनों पर तरस-तरस कर मां ने बेटा और दादी ने अपने वंश का दीपक पाया था। किरण के जन्म के बाद सचमुच में पारिवारिक जीवन में एक खुशहाली की किरण चमक उठी। प्यार से सब उसे टिप्पू कहते थे। किरण से बड़ी दो बहनें थीं। उनके पिता के शब्दों में—'हरदम बहनों की सुरक्षा में रहने और दादी के अधिक लाड़-प्यार से टिप्पू बहुत नाजुक और कोमल बन गया था। न केवल शरीर से ही परन्तु मन से भी वह बहुत कोमल और भीरु था। कोई उसे कुछ कह देता तो रोने लगता। दौड़कर दादी के पास शिकायत करता। इस कारण से हम उसे 'सिस्सी' कहते थे।'

किरण की माता ने मुझे बताया—'हमने उसका दुलार का नाम टिप्पू रखा था। मैं चाहती थी कि वह टीपू सुल्तान-सा बहादुर बने। उसकी दादी के अधिक लाड़-प्यार पर जब मैं झुंझलाती तो वह कहतीं—भगवान ने बेटा दिया है, जी जाए यही बहुत है। भगवान तुझे और बेटा दे देगा पर यह तो मेरा है,

मेरा। तुम्हें इसके पालने-पोसने के मामले में नुक्ताचीनी करने की जरूरत नहीं।

ऐसी बात सुनकर टिप्पू की मां निराश हो जाती। पति को उलाहना देतीं—देखो जी, टिप्पू मुझे तो अपनी मां समझता ही नहीं। मुझे तो बेटे का प्यार ही नहीं मिला।

इसपर सेठ साहब हंसकर कहते—तुम समझती क्यों नहीं। यह अम्माजी की दुआ से ही हमें मिला है। देखती नहीं उनके प्राण टिप्पू में ही बसते हैं। कितनी बार रात में भी उठकर वह उसे देखती है। बच्चा भी इस प्यार को समझता है।

—और यदि अम्माजी ने उसे दब्बू और सिस्सी बना दिया तब?

—नहीं, नहीं ऐसा नहीं होगा। जब बड़ा होगा, स्कूल जाने लगेगा तब वह खुद ही लड़कों की तरह निडर बन जाएगा। आखिर है किस बाप का बेटा?—यह कहकर सेठ साहब मुस-करा देते।

एक बार जबकि टिप्पू चार-पाच बरस का था वह एक मुंडेर पर चढ़ गया। दादी ने हो-हल्ला मचाया—बच्चा गिर जाएगा, पकड़ो, पकड़ो। यह देखकर मां को हंसी आ गई। वह बोली—मुझे यह देखकर खुशी हुई कि टिप्पू ने आज लड़कों की तरह की कुछ शैतानी तो की।

इसी तरह साल बीतते गए और टिप्पू माडर्न स्कूल में दाखिल हो गया। वहां के प्रिंसिपल ने इस भीरु पर तेजस्वी बच्चे को बहुत बढ़ावा दिया। सुयोग्य गुरुओं के हाथ से टिप्पू का चरित्र गढ़ा जाने लगा। वह न केवल अपने स्कूल में तैराकी

में अव्वल रहा परन्तु माडर्न स्कूल को इंटर स्कूल तैराकी प्रतियोगिता में कई बार प्रथम स्थान दिलाया। बास्केटवाल में भी माडर्न स्कूल को उसके कारण चैम्पियनशिप प्राप्त हुई।

जिस टिप्पू को बचपन में सभी सिस्सी कहते थे किशोरावस्था में वह एक निडर, मेहनती और अपने उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए दृढ़प्रतिज्ञ प्रमाणित हुआ। सेठ साहव ने वताया कि जव वह पहली बार अपने एन० सी० सी० के बैच के संग राजस्थान यात्रा पर जाने लगा तो हमें देखकर हैरानी हुई कि वह अपना सूटकेस खुद उठाकर ले गया। हमारे लिए तो यह एकदम नई वात थी। उसकी मां यूनिफार्म में उस नन्हें केडेट को देखकर फूली नहीं समा रही थी। उन्हें ऐसी अनुभूति हुई कि यह नन्हा टिप्पू किसी दिन अवश्य कुछ कर दिखाएगा। कैम्पिग से लौटने के बाद तो टिप्पू में बहुत परिवर्तन हो गया था। वह अपना हर काम खुद करता। जिम्मेदारियों को वड़ी सफलता के साथ निभाता।

किशोर वय में आकर उसे अपनी सेहत वनाने का विशेप चाव हो गया। पोशाक के मामले में उसका झुकाव सादगी की ओर था, परन्तु दूध, दही, पौष्टिक भोजन, मिठाई आदि का वह वड़ा शौकीन था। तैराकी और खेल-कूद में अधिक रुचि होने के कारण उसका शरीर पतला पर पुष्ट और फुर्तीला था। यह कहकर उनकी माताजी अपने पुत्र को याद करके विलखने लगीं। मैंने सान्त्वना दी तो वोलीं—वहन, ऐसा तो मेरे लिए वाजिव है। घर का चिराग गुल हो गया। उसे क्या अपने आंसुओं का अर्घ्य न चढ़ाऊं? मैं उसकी मां हूं।

तैराकी तो उसकी हाबी बन गई थी। वह अधिक से अधिक समय उसमें लगाता। प्रतियोगिता के दिनों में दूध घी डालकर पीता ताकि शक्ति बनी रहे। उसका पतला पर सुगठित शरीर एक मजबूत देवदार के पेड़ की तरह था। पानी में जब वह बोर्ड पर से नीचे को कूदता तो ऐसा लगता मानो कोई तराशा हुआ शहतीर पानी में लोप हो गया हो। मछली की तरह तैरता हुआ वह तेजी से आगे को निकल जाता। उसकी तैरने की शैली अद्भुत थी। जब वह दौड़ खत्म करके स्विमिंग पूल से बाहर विजयी होकर निकलता तो युवक उसे घेर लेते। न केवल दिल्ली में ही परन्तु अन्तरप्रान्तीय तैराकी प्रतियोगिता में वह हीरो बना रहा।

१६५८ में अन्तर स्कूल तैराकी चैम्पियनशिप में उसने सर्वश्रेष्ठ तैराक का टाइटल प्राप्त किया था। इससे एक वर्ष बाद उसने डी० पी० ए० प्रतियोगिता में नया रिकार्ड स्थापित किया था। इसी प्रकार उसने अन्तर कालेज तैराकी प्रतियोगिताओं में भी कितने ही रिकार्ड स्थापित किए। वह वाटर पोलो का श्रेष्ठ खिलाड़ी भी था।

किरण सेठ ने १६५८-५६ में माडर्न स्कूल का नाम रोशन किया। माडर्न स्कूल ने उसी वर्ष चीफ कमिश्नर शील्ड उठाई। उसने माडर्न स्कूल, सेंट स्टीफन कालेज और फिर विश्वविद्यालय तैराकी टीमों का नेतृत्व किया।

सेठ साहब ने मुझे बताया कि जिस दिन उसका रिजल्ट निकलने वाला था। रात के एक बजे तक वह घर नहीं आया। क्योंकि उसे इस बात की शर्म थी कि वही मैं पढ़ाई में [illegible] पास न हुआ हूँ क्योंकि अधिकांश समय वह तैराकी प्रतियोगिता

में विजय प्राप्त करने की ओर ही लगाता रहा। अपने स्कूल का नाम ऊंचा करने के आगे उसने व्यक्तिगत लाभ की उपेक्षा ही की। पर जब उसे प्रिंसिपल ने बताया कि कुछ नम्बर से ही उसने फर्स्ट डिवीज़न मिस की है तो सन्तुष्ट होकर वह घर आया।

उसे 'आउट डोर लाइफ' बहुत पसंद थी। इसीलिए एन० सी० सी० में उसे काफी सफलता मिली। हायर सेकंडरी के बाद ही वह एयर फोर्स ज्वाइन करना चाहता था। परन्तु छुटपन में छत से एक बार गिर जाने के कारण उसकी आंखें कुछ कमज़ोर हो गई थीं। इस कारण आर्मी में भी चुना नहीं गया। इसलिए उसने सेंट स्टीफन कालिज ज्वायन कर लिया। वह बी० एस-सी० के अन्तिम वर्ष में था जब कि चीन ने भारत पर हमला किया। इमरजेंसी कमीशन में कई लोग भरती हुए। रूल कुछ ढीले किए गए थे इसलिए किरण सेठ भी चुन लिया गया। जिस दिन उसको इस बात की सूचना मिली वह बेहद खुश हुआ। अपने डैडी के पास आया और बोला—डैडी, मेरे जीवन की अभिलाषा पूरी हुई। मुझे कुछ कर दिखाने का मौका मिला है।

जब वह मिलिटरी ट्रेनिंग के लिए पूना गया वहां भी तैराकी में अपने यूनिट का नाम ऊंचा किया। ट्रेनिंग के बाद वह जम्मू आदि स्थानों पर ही तैनात रहा। उसके मामा और चचेरे-ममेरे भाई सभी सेकंड लान्सर में थे इसलिए उसने भी सेकण्ड लान्सर ही ज्वाइन की थी। इसी जुलाई में जब कि वह ४५ दिन की छुट्टी पर घर आया हुआ था, पाकिस्तान ने हमला किया और उसे अपने यूनिट में पहुंचने का हुक्म हुआ। पहले उसकी यूनिट को जालंधर में रखा गया। इससे उसे बड़ी निराशा हुई। उसने

२ सितम्बर को अपने पत्र में पिता को लिखा कि यहां पर तो शान्ति है। मेरी भुजाएं लड़ने के लिए फड़क रही हैं। इसलिए 'पीस स्टेशन' में रहकर मुझे निराशा ही हुई।

५ सितम्बर की चिट्ठी में उसने लिखा—डैडी अब हम स्यालकोट में हैं। यहां आकर मजा आ गया। शत्रु से बहुत जल्द दो-दो हाथ होंगे। आखिरकार पास ही तो मेरी जन्मभूमि है। (किरण का जन्म पाकिस्तान में मुरी में २४ अगस्त १९४२ को हुआ था) यही पल-पोस कर मैं बड़ा हुआ था। यह देखकर दुख लगता है कि बुरे इरादे वाले कुछ पाकिस्तानी नेताओं ने इस पवित्र भूमि को अपने कारनामों से नापाक कर दिया है। पर बहुत जल्द ही इनको सबक सिखाऊंगा।

वीर गति प्राप्त करने से एक दिन पहले ७ सितम्बर को उसने लिखा—डैडी, मैं मजे में हूं। आप मेरी फिक्र न करें। एक योद्धा रणभूमि में ही शोभा देता है। आसपास का वातावरण इतना प्रेरणाप्रद है कि बस क्या बताऊं।

८ तारीख को वह दिन भी आ पहुंचा जब कि स्यालकोट में घमासान युद्ध हुआ। टिप्पू इसी दिन की तो बाट जोह रहा था कि मातृभूमि का ऋण उतार सकूं। उसकी कम्पनी ने खूब बहादुरी से युद्ध किया। शत्रु के कई पैटन टैंक नष्ट किए। पाकिस्तान का काफी नुकसान हुआ। उनके अनेक जवान मारे गए। वे बुरी तरह से हार खाकर घोर भारी नुकसान उठाकर पीछे को भागे। युद्ध के बाद नौजवान भारतीय जवानों को विजय का उन्माद था। युद्ध क्षेत्र में चारों ओर शत्रु धराशायी पड़े थे। बेकाम पैटन टैंक बिखरे पड़े थे। इस विषय में टीपू के अफसर ने

लिखा है कि हमारी बख्तरबंद सेना आगे बढ़ रही थी। इस मौके पर टीपू मेरा इंटेलीजेंट आफिसर की हैसियत से काम करता था। उसका काम शत्रु की हलचल की खबर देना और मेरी तोप में गोला भरना भी था। यह काम उसकी योग्यता के कारण ही उसे सौंपा गया था। वह मेरे टैंक में ही था। खूब घमासान युद्ध हो रहा था और हम आगे बढ़ते जा रहे थे। इतने में मेरे टैंक में शत्रु का गोला लगा। मेरे साथ बैठे तीन अफसर तो उसी स्थान पर वीर गति को प्राप्त हो गए। टीपू बुरी तरह घायल हो गया था। लेकिन किसी तरह वह जलते टैंक से बाहर कूद पड़ा। हमने तुरन्त उसे स्थिर आर्मी फोर्स तक ले जाने का प्रबन्ध किया। उसको बचाने के यथासंभव प्रयत्न किए गए पर अफसोस रास्ते में ही सब कुछ समाप्त हो गया।

अफसोस! जिन वीरों को समक्ष-युद्ध में शत्रु नहीं परास्त कर सके, उसे उन्होंने छिप कर मारा। जब यह दुखद समाचार किरण के माता-पिता को मिला तो वह विश्वास नहीं कर सके क्योंकि उसी समय तो उन्हें किरण की ७ तारीख की चिट्ठी मिली थी। किरण इतना लोकप्रिय था कि उसके सहपाठी और सहयोगी सभी उसकी मृत्यु पर द्रवित हो उठे।

टिप्पू अपने दोस्तों में बहुत ही लोकप्रिय था। वह हंसमुख, सबसे आगे, न केवल तैराकी परन्तु दौड़, बास्केट बाल, कबड्डी, अभिनय सभी कामों में चतुर था। वह जिस समूह में भी रहा सबका प्रिय बनकर रहा। जो काम भी उसे सौंपा गया बड़ी शान से उसने उसमें सफलता पाई। यही कारण था कि वह अपनी रेजीमेंट का इन्टेलीजेंट आफिसर चुना गया था। यह एक

बहुत इज्जत की बात है।

माडर्न स्कूल के स्टाफ तथा छात्रों ने सोमवार को सभा कर सेठ की मृत्यु पर शोक प्रकट किया। प्रिंसिपल एम० एन० कपूर ने कहा कि माडर्न स्कूल से निकले हुए छात्रों में वह सर्वश्रेष्ठ था। माडर्न स्कूल ओल्ड बायज एसोसियेशन सचिव श्री राजिन्दर सिंघल ने भी श्रद्धांजलि अर्पित की। टिप्पू के जिगरी दोस्तों ने ने भी अश्रुपूर्ण नेत्रों के साथ श्रद्धांजलि दी। उसके प्रियतम दोस्त अशोक झालानी ने सेठ की याद में शील्ड अर्पित की जो आगामी पौट वेलोज इन्वीटेशन तैराकी प्रतियोगिता मे दी जाएगी। सब सहपाठियों को दुख था कि अब वह अपने प्रिय तैराक को तैरते हुए न देखेंगे। वह तो भवसागर को ही पार कर अमर हो गया।

मैं जब उनकी माताजी और पिताजी से इंटरव्यू लेने गई तो पिता का कंठ आंसुओं से रुद्ध हो गया। मा सुबक-सुबक कर रोती रही। मुझे लगा यह केवल किरण के पिता का दुःख नहीं है, केवल उसकी ही मा नहीं रो रही है अपितु यह अनेक ऐसे पिता और माताओं का दुःख है जिनके नौनिहाल सपूत मानव की युद्ध-पिपासा की आहुति चढ़ गए हैं। शान्तिप्रिय देशों पर जब डाकू और लुटेरे प्रवृत्ति के राष्ट्र हमला कर देते हैं तो न चाहते हुए भी उन्हें अपने आत्म-सम्मान के लिए युद्ध करना पड़ता है। किरण के पिता ने कहा—किरण की मृत्यु का सदमा हमारे लिए असहनीय है, परन्तु उसने न केवल हमारे कुल का परन्तु देश का भी मुंह उज्ज्वल किया। हमें उसपर अभिमान है। देश के मान और गौरव के लिए जिन वीरों का जीवन बलिदान हुआ है, वह व्यर्थ नहीं गया। इस युद्ध में हम सुर्खरू होकर निकले हैं।

मांगना है आज हमको, फैसला शमशीर से,
दूर रखना है भड़कती आग को कशमीर से।
इस जमीं के हर गुन तर को हिफाज़त फर्ज है,
यह हमारा घर है, इस घर को हिफाजत फर्ज है ।।

हमारा मजहब है देशप्रेम

जी हां, आप अयूब खां के नाम से तो परिचित होंगे ही। पर देखिए समझने में गलती मत कर बैठिए, हमारे बहादुर अयूब खां में तथा पाकिस्तान के डिक्टेटर मियां अयूब में बहुत फर्क है। क्योंकि दोनों के इरादे में ज़मीन-आसमान का अन्तर है। पाकिस्तान के मियां अयूब की यह नीति रही है कि हिन्दुस्तान तबाह हो जाए, उसे गुलाम बना दिया जाए, उसकी प्रगति रोक दी जाए, उसे कुचलकर दिल्ली पर पाक का झण्डा लहरा दिया जाए। भारत की एकता उन्हें फूटी आंख नहीं सुहाती। यहां पर गड़बड़ फैलाने के लिए उन्होंने जासूस छोड़े हुए थे। अमन पसंद

भारत पर एकाएक हमला करके उन्होंने युद्ध की घोषणा कर दी। हमारी तैयार नहीं की उखाड़ देने के लिए उन्होंने भरसक कोशिश की पर वाह रे भारत के बहादुर नौजवान, वाह रे हमारे सपूत मां, जिन्होंने शत्रु के सब नापाक इरादों को विफल कर दिया।

सपूत मां के सदृश देशभक्त हर भारतीय नागरिक शत्रु की चरनचोली को समझता है, उसकी मीठी-मीठी बातों को सुनकर वह उठता है कि—

'मगर तुम्हारी निगाहों का तीर है कुछ और।
ये बहके-बहके कदम, उठ रहे हैं किस जानिब॥'

८ सितम्बर की भयानक रात। पाकिस्तानी सेनानायकों को यह विश्वास था कि हमारा तोपखाना अभेद्य है। हमारे पैटन टैंक भारतीयों के काल हैं। हमारे इन मुफ्ती टैंकों के गर्जन को सुनकर भारतीय सर पर पांव रखकर भाग खड़े होंगे। इसी आत्मविश्वास के घोखे में तानाशाही सपूत ने अपार पाक सेना को चारों ओर से भारत सीमा की ओर बढ़ने का आदेश दिया। उन्होंने सोच रखा था कि जहां हमारे टैंकों और तोपखानों ने भारतीय सेना को घेरा भी, वे चूहे की मौत मारे जाएंगे। और हम दनदनाते हुए दिल्ली पहुंचकर दिल्ली के 'सुलतान' बन जाएंगे। कहते हैं कि इसी स्वप्न को पूरा करने के लिए मियां अयूब खुद ही सेना के संचालन के आदेश दे रहे थे। उन्हें यह नहीं मालूम था कि भारत में भी देश-भक्त अयूब हैं। हमीद, त्यागी और भूपेन्द्रसिंह जैसे वीर हैं, जो कि उनके पैटन टैंकों के

धुर्रे उड़ा देंगे।

कहते हैं कि आठ सितम्बर को सातों मोर्चों पर जो भयंकर युद्ध हुआ वह संसार के पैटन टैंक युद्धों में से बहुत ही भयानक था और इसमें भारतीय रण कौशल और बहादुरी का सिक्का कायम हो गया। आम तौर पर टैंक युद्ध केवल दिन के समय ही होता है, और रात को उनको टूट-फूट की मरम्मत के लिए पीछे भेज दिया जाता है। पर हमारे टैंक युद्ध क्षेत्र में लगातार १५ दिन तैनात रहे। हमारे मिस्त्री और इंजीनियरों ने जो तत्परता उनकी मरम्मत करने में दिखाई वह अभूतपूर्व सहयोग का एक आदर्श उदाहरण था। एक कमांडर ने बताया कि—टैंकों की सब ज़रूरतें युद्ध-क्षेत्र में ही पूरी की जाती रहीं। इस कार्य में हमारे मिस्त्रियों, इंजीनियरों और रसद पहुंचाने वाले लोगों ने अपने प्राणों को हथेली पर रखकर जो योग दिया वह अत्यन्त सराहनीय था। उन्होंने यह भी बताया कि टैंक-युद्ध अधिक से अधिक तीन दिन तक चलता है, किन्तु हमने युद्ध-विराम होने के दिन तक छुट्टी नहीं ली। अर्थात् हमने उसे पूरे १५ दिन चलाया। यह हमारे टैंक-योद्धाओं की अनुपम बलिदान-वृत्ति का परिचायक है।

इस युद्ध में अयूब खां ट्रुप कमाण्डर की हैसियत से अपनी टुकड़ी का संचालन कर रहे थे। इस टुकड़ी में तीन टैंक थे। ८ सितम्बर को अफसर ने हुक्म दिया—अयूब, तुम जम्मू-स्यालकोट की सड़क पर पाक सीमा में आगे बढ़कर फिर सुबह तक लौट आओ।

—यस सर—कहकर, सैल्यूट मारकर अयूब अपने टैंक पर

श्रा बैठे। टुकड़ी आगे बढ़ी। दुश्मन हवाई जहाजों की नजर इन पर पड़ गई और उन्होंने गोते खा-खा कर इनपर बम वर्षा करनी शुरू की। पर 'जाको राखे साईयां, मार सके न कोय'। अयूब अपने टैंकों के साथ सही-सलामत वापस लौट आए। दूसरे दिन जब वे फिर उसी सड़क पर आगे बढ रहे थे कि पाक सेना ने उनके दायें से बढ़कर पीठ की ओर मोर्चा सभाल लिया। इसका मतलब तो यह था कि अपनी अन्य टुकड़ियों से कट कर लड़ते-लड़ते मर मिटना। इसी समय उनके स्क्वाड्रन को हुक्म हुआ कि घेरे को तोड़ कर पीछे लौटो। स्क्वाड्रन कमाण्डर ने घेरा तोड़ने का काम हमारी कहानी के नायक रिसालदार अयूब खां को सौंपा। मौत का सामना था। पर दिलेर अयूबखां ने सोचा आज मौका मिला है मनचाहा। उसके साथ कुल तीन टैंक थे। सबसे आगे उसने अपना टैंक किया और बायें-दायें अन्य दो टैंक करके, योजना बनाकर आगे बढ़े।

शेर के आगे गीदड़ भला कितनी देर टिकते! अयूब ने उन-पर ऐसी गोलियां बरसाईं कि दुश्मन भाग खड़े हुए। उनका एक टैंक बिल्कुल सही हालत में पकड़ा गया। उनके नये-नये टैंक, मानो विजय की ट्राफी थीं। अयूब को उनके तोपचियों और टैंक चालकों के फूहड़पन [illegible] सब बुजदिल और नि[illegible] साबित [illegible] ठीक नहीं

[illegible]

अपनी

जा रहे

थे। सबसे आगे अयूब का टैंक था। शत्रु के हवाबाज़ इनपर ऊपर से बाज की तरह टूटे और सामने शत्रु की तोपें आग उगल रही थीं। पर वाह रे वीर अयूब। अपनी राजपूती परम्परा को निभाने का निश्चय कर उन्होंने मरते दम तक शत्रु से निबटने का तय किया। उन्होंने अपने साथियों से कहा—भाइयो, वीर तो सर पर कफन बांधकर ही मैदान में उतरता है। चलो, एक बार मौत को भी ललकार लिया जाए। याद रखो, यदि डरे तो मरे।

अयूब खां के शब्दों में—मेरे आगे ३०० गज़ की दूरी पर एक उपयुक्त स्थान था जहां से शत्रु पर गोलाबारी ठीक से की जा सकती थी। बस मैंने फुर्ती से अपना टैंक उस ओर को मोड़ा। शत्रु की गोलियां मेरे बायें-दायें से सनसनाती हुई निकल गईं। अन्य दोनों टैंकों ने भी मेरा अनुकरण किया। वहां जाकर मोर्चा संभालकर मैंने फायर करने का हुक्म दिया। पहले फायर में ही दुश्मन का एक टैंक लड़खड़ा गया। दूसरे राउण्ड में उसमें से आग निकलने लगी। इसके बाद हमने दूसरे टैंक को अपना शिकार बनाया। दो राउण्ड में वह भी स्वाहा हो गया। इससे हम लोगों का मनोबल बहुत ऊंचा हो गया। मैंने वायरलैस से अपने कमाण्डर को इसकी सूचना फौरन दे दी। उन्होंने भी दूर से टैंकों की होली जलती हुई देखी और खुश हुए। शुरू में हमारी स्थिति बड़ी नाजुक थी, किन्तु पलक झपकते ही सब काम हो गया। जब तक दुश्मन को मालूम हो कि हम पीछे मुड़ गए हैं, हमने उसके चार टैंकों को मार गिराया। इस लड़ाई में पाकिस्तान के अनेक टैंकों को नुकसान पहुंचा और हमारे जवानों की वीरता से दुश्मन

की खतरनाक चाल नाकाम कर दी गई।

इसी बीच में हमारी टुकड़ी के अन्य दो टैंक भी आजू-बाजू जम गए थे। अब तो हौसला और बढ़ गया। हम तीनों टैंकों ने मिलकर शत्रु की व्यूह रचना न केवल तोड़ डाली पर उन्हें पीछे हटने को भी मजबूर किया। बिजली की कौंध जैसे इस युद्ध में शत्रु के अनेक टैंक नष्ट हुए। उनके मनसूबों पर पानी फिर गया। भारतीय टुकड़ी अपनी विजय दुंदुभी बजाती हुई आगे बढ़ गई।

इस मोर्चे पर इस प्रकार की झड़पें कई हुईं। हम शत्रु पर अचानक हमला बोल देते थे और रातो रात अपने टैंक लेकर सामने से हट जाते थे। शत्रु धोखे में आ जाता था, वह समझता था कि हम डरकर हट गए हैं। पर मौका देखकर फिर पीछे से उन्हें जा दबोचते थे और उनके टैंक तथा सेना को रौंदकर नष्ट कर देते थे। हमारी इस छापामार युद्ध नीति से उनकी सारी टैंक व्यवस्था बेकाम हो गई। कई बार तो टैंक की अपेक्षा हमने टैंक चालक और तोपचियों को अपना निशाना बनाना ही उचित समझा ताकि नये-नये चमकते-दमकते टैंक हमारे कब्जे में आ जाएं। फिर हमने मियां की जूती मियां के सर का हिसाब रखा। जब भी मौका मिला उनके टैंक, तोप, बन्दूकों और गोलियों से उन्हीको भून डाला। सच कहा जाए तो हमने स्यालकोट मोर्चे पर शत्रु को ऐसी भारी शिकस्त दी कि उसकी कमर टूट गई। आत्मविश्वास हिल गया।

चाहे पाक सेना आधुनिक शस्त्रों से सुसज्जित थी पर वह उसका सदुपयोग नहीं कर सकी। जिस तरह हवाई युद्ध में उनके सैबर चालक हमारे नैट चालकों से मार खा गए, उसी प्रकार टैंक

युद्ध में भी पाक सेना को मुंह की खानी पड़ी। वे अन्धविश्वासी थे और मज़हब के नाम पर लड़ने को बाध्य हुए थे। जब कि हमारा मज़हब था देशरक्षा। टैंकों को फुर्ती से मोड़ना, ठीक निशाना लगाना तथा योजना बनाकर हमला करना आदि में हमारे योद्धा अधिक चतुर थे। हमारी सेना में देश-भक्त थे, जबकि उनकी सेना लुटेरों की एक जमात थी। यही कारण था कि हमारे वीर चालीस-चालीस घंटों तक टैंकों के अन्दर बैठे हुए गर्मी, ऊमस तथा भयानक शोर का खामोशी से सामना करते रहे। इसके विपरीत शत्रु के जवानों में परिस्थिति का मुकाबिला करने का ऐसे ज़बर्दस्त दृढ़ संकल्प का अभाव था। पन्द्रह दिन के विभिन्न मोर्चों पर शत्रु के २४२ टैंक भारतीय सेना ने नष्ट किए। सभी मोर्चों पर भारतीय सेना ने ऐसी बहादुरी दिखाई कि शत्रु को खदेड़ कर उन्होंने भली प्रकार व्यूह रचना कर ली।

नायब रिसालदार अयूब खां को पाकिस्तान के खिलाफ लड़ाई में जौहर दिखाने के लिए भारत सरकार ने वीर चक्र से सम्मानित किया। वास्तव में अयूब खां पर भारत को अभिमान है। वह भारत मां के सच्चे सपूत हैं। मोर्चे से उन्होंने अपने चाचा भूरे खां को लिखा था, "खुदा के करम से मैंने अपने अज़ीज़ वतन के लिए अपने फर्ज़ को ठीक तौर पर निभाया है। और अल्ला ताला से दुआ मांगता हूं कि आगे भी अपने खून के आखिरी कतरे से मुल्क की आज़ादी को आंच न आने दूं।"

मुहम्मद अयूब खां का व्यक्तित्व बड़ा प्रभावशाली है। कद

५ फुट १० इंच ऊंचा, १७० पौंड वजन, चौड़ा सीना, गठी हुई मांस पेशियां और हंसता हुआ चेहरा। देश-भक्ति की चमक उनकी आखों से जाहिर होती है। उनकी आयु ३० वरस की है। वह भरे-पूरे परिवार के सदस्य हैं। आपका जन्म राजस्थान के झुंझनू जिले के नवां ग्राम मे हुआ था। आप राजस्थानी है। इनके वंशज कायमखानी मुसलमान चौहान राजपूतों मे से हैं। आप एक वीर और नामी खानदान के सपूत हैं। आपके पिता और दादा भी फौज में थे, जिस रेजिमेंट में अब अयूब खां है उसी में इनके पिता भी दफेदार मेजर थे। उनके दादा द्वितीय महायुद्ध में लड़े। एक चाचा ने वीरगति भी प्राप्त की थी।

अयूब खां छुटपन से ही अच्छे खिलाडी रहे है। अपनी रेजिमेंट के फुटवाल टीम के कप्तान और हाकी के भी खिलाडी रहे। १९५० में उन्होने आरमर्ड कोर ज्वाइन की। १९६५ में वे नायब रिसालदार बने। बचपन में उनकी शिक्षा केवल मिडिल तक हुई थी, परन्तु सेना में भर्ती होकर उन्होंने मैट्रिक के बराबर की योग्यता प्राप्त कर ली। आपका परिवार भरा पूरा है। दो बहनें हैं। दो भाई, खेती-बाड़ी सभालते हैं, शेष दो छोटे भाई अभी पढ़ते हैं। जब राजस्थान के मुख्य मन्त्री ने शूरवीरों के सत्कार-उत्सव पर उन्हें केसरिया सरोपा और तलवार भेंट की तो छोटे भाई बाप से बोले—देखना अब्बा, हम भी एक दिन भाई साहब की तरह कुछ नाम कमाकर दिखाएंगे।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि अयूब खां के कारनामों से हमारे युवक समाज को देश के लिए कुछ कर दिखाने की प्रेरणा मिलेगी। अयूब का कहना है कि "अपने अजीज मुल्क के लिए

मेरी ज़िन्दगी कोई माने नहीं रखती। अपनी जान को अपने फर्ज़ पर निछावर कर दूंगा। हमें सबसे ज़्यादा अज़ीज़ हमारा हिन्दुस्तान है। वीर वही है जो मां के दूध को दाग न लगने दे। मैंने जो कुछ किया वह मेरा कर्तव्य था। अपने साहस ने ही मेरा साथ दिया और पाकिस्तानी बमों और गोलियों की बौछार के बीच खुदा ने ही मेरे टैंक को सुरक्षित बचाए रखा। मेरे युद्ध कौशल का श्रेय उन गुरुओं को ही दिया जाएगा, जिन्होंने मुझे ट्रेनिंग दी।"

अयूब ज़िन्दाबाद !!

तेरा दामन कभी नापाक छू सकेंगे नहीं,
तेरे बेटों के हाथ ने इसे संभाला है।
आ गई है जो मुसीबत मेरे वतन पे अगर,
और इस जंग ने पर हम पे सितम ढाया है।।

रणबांकुरा सुरेन्द्रकुमार

खेमकरण के युद्ध में मानो महाभारत की पुनरावृत्ति हुई। यहां भारत के अनेक वीर अभिमन्यु शहीद हुए। इन आत्म-बलिदानियों ने अपना चौड़ा सीना आगे करके शत्रु के पैटन टैंकों को खामोश कर दिया। ऐसे ही वीर अभिमन्युओं में से एक थे कैप्टेन सुरेन्द्रकुमार। खेमकरण पर घमासान युद्ध हो रहा था। लाहौर के अग्रिम मोर्चे पर से कैप्टेन सुरेन्द्र ने अपने पिता को लिखा था—इस समय हमने दुश्मन की बिल्कुल कमर तोड़ दी है। हमारी शक्ल देखते ही पाकिस्तानी सिपाही भाग खड़े होते हैं। इस समय हम लाहौर के काफी पास हैं, अगले हुक्म का

इन्तज़ार है।

इस वीर जाट नवयुवक ने खेमकरण के युद्ध में जो अपूर्व वीरता दिखाई, वह नवयुवकों के लिए एक प्रेरणा का स्रोत है। जिस मेरठ ज़िले में मेजर आशाराम त्यागी का जन्म हुआ उसी ज़िले में हमारा यह रणबांकुरा भी ५ नवम्बर १९३८ में पैदा हुआ था। इनके पिता मास्टर तेगराम जी मेरठ ज़िले के बामनोली गांव के सिल कल्याण गोत्रीय जाट हैं। इसी गांव की मिट्टी में खेल-कूदकर सुरेन्द्रकुमार का बचपन बीता। इनके पिता बड़े समाजसेवी विचार के थे। उन्होंने बचपन से ही अपने बेटे के चरित्र-निर्माण की ओर विशेष ध्यान दिया। सदाचार, वीरता, निडरता आदि गुण मानो हमारे सुरेन्द्रकुमार के स्वभाव के अंग बन गए थे। सूरजमल विद्यालय में प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करके, बाद में उन्होंने अबोहर म्युनिसिपल हाई स्कूल से दसवीं परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास की। उसके बाद जालन्धर से डी० ए० वी० कालिज से बी० ए० पास किया। वह कालिज-जीवन से ही एन० सी० सी० में बड़ी दिलचस्पी लेते रहे और उसमें विशेष परीक्षा पास की। उन्हें बचपन से व्यायाम करने तथा स्वास्थ्य निखारने का बड़ा शौक था। वह खेल-कूद में विशेष दिलचस्पी लेते थे। अन्तरराज्यीय खेल-कूद में हमेशा प्रथम रहते आए। पढ़ाई समाप्त करने के बाद, उन्होंने सेना में स्थायी कमीशन प्राप्त कर ली। एक साल के अन्दर ही उन्हें कप्तान बनाकर, १९६२ में भारत चीन युद्ध के समय उपूसी के मोर्चे पर भेज दिया गया। वहां पर भी उन्होंने अपनी सूझ-बूझ व बहादुरी का प्रमाण दिया। ट्रांगजोग के स्थान पर कैप्टेन

सुरेन्द्रकुमार शत्रु के घेरे में आ गए थे परन्तु उन्होंने शत्रु के कैदी बनने की अपेक्षा जोखिम उठाकर निकल जाना तय किया और वह घेरे से निकलकर भूटान के भयंकर जंगलों और पहाड़ी खूंखार रास्तों को पार करते हुए लगभग २० दिन बाद अपने आधार क्षेत्र बोमदिला पहुंचे।

उनकी बहादुरी और सहनशक्ति तथा सूझ-बूझ को देखकर उन्हें भारत सरकार ने हिमालय डिवीज़न में शामिल कर दिया। उस समय यह अनुभव किया गया कि पहाडी प्रदेश में लड़ने के लायक कुछ और डिवीज़न तैयार किए जाएं। उनमें से एक डिवीजन का जिम्मा कै० सुरेन्द्रकुमार को सौंपा गया। वह दो वर्ष तक हिमालय की बर्फानी चोटियों पर वहां की कठिनाइयों को सहने का अनुभव प्राप्त करते रहे।

जुलाई ६३ में भारत सरकार ने एक मिशन को यह काम सौंपा कि लद्दाख के मध्य क्षेत्रीय प्रदेश की अधिक जानकारी प्राप्त की जाए। मिशन में कै० सुरेन्द्रकुमार को भी शामिल कर लिया गया और वह ढाई हजार फुट की ऊंचाई तक गए तथा लगभग तीन सौ मील तक की यात्रा की। इतनी ऊंचाई पर दिन-रात भयंकर हिमपात होता है। हड्डी को चीरने वाली हवा चलती है। पर जवांमर्द कै० सुरेन्द्रकुमार के लिए यह अनुभव भी आनन्दप्रद रहा। उनकी इस हिम्मत ने उन्हें अफसरों का बहुत ही अधिक विश्वासपात्र बना दिया। इसके बाद वह शिमला से ७० मील ऊपर अपनी बटालियन को लेकर कैम्प में भी काफी समय रहे।

× × ×

१९६५ में जब पाक ने अचानक कश्मीर पर हमला बोल दिया तो भारत के लिए उन्हें दूसरा मोर्चा खोलने से रोकने के लिए यह जरूरी हो गया कि हमारी सेना सीमा पार करके आगे बढ़े। इसी सिलसिले में ३ सितम्बर को कै० सुरेन्द्रकुमार को अपनी बटालियन के साथ फिरोजपुर से अमृतसर पहुंचने का हुक्म हुआ। उसके तीन दिन बाद ही बाघा सीमा की ओर से उनकी बटालियन ने पाक सेना पर ज़बरदस्त हमला कर दिया। कै० कुमार अग्रिम सैन्य दलों के साथ थे। वे शत्रु को पीछे 'धकेलते हुए, १३ मील पाक सीमा में घुस गए और बर्की से भी आगे पहुंच गए।

इसी बीच पाक ने टैंकों व मज़बूत बख्तरबंद गाड़ियों के साथ खेमकरण पर ज़बरदस्त हमला कर दिया और वह भारत सीमा के अन्दर ६ मील तक अन्दर घुस आया। ऐसे मौके पर कै० कुमार जैसे बहादुर व सूझबूझ के धनी बटालियन नायक की ज़रूरत थी। उन्हें हुक्म हुआ कि फौरन अपनी बटालियन लेकर खेमकरण का मोर्चा संभालो।

खेमकरण का युद्ध इतिहास में स्वर्ण अक्षरों में लिखा जाएगा। छम्ब-जौड़ियां पर जनरल मूसा ने अपने जवानों को ललकारा था कि शत्रु के गोश्त में तुमने अपने दांत गाड़ दिए हैं। अब उन्हें ज़ोर से काटो। कसकर पकड़ो। पर छम्ब-जौड़ियां में उनके ९० टैंकों के जैसे धुर्रे उड़े उन्हें वे अभी भूले नहीं थे कि खेमकरण में भारतीय जवानों ने उन्हें जा दबोचा और उनके वे दांत; जिन्हें वे भारतीय जवानों के गोश्त में गड़ाने की सोच

रहे थे, हमेशा के लिए उखाड़ दिए गए। कहीं-कहीं तो उन टैंकों के साथ उनकी खोपड़ी भी भू लुंठित दिखाई पड़ी।

फलस्वरूप पाकिस्तान के पैटन टैंकों का कब्रगाह बना दिया गया। यहीं पर मियां अयूब के सपने भी चकनाचूर हुए। जिन पैटन टैंकों को आगे करके वह टहलते-टहलते लालकिले तक आने के सपने देख रहे थे उनके पुर्जे उड़ा दिए गए। जो उन्होंने सोचा था, हुआ ठीक इसके उल्टा। अपने पंजे दबाते-दबाते भारतसिंह ही इच्छोगिल नहर तक पहुंचकर दहाड़ उठा। लाहौर पर कब्जा करने का तो हमारा विचार ही नहीं था। बस इच्छोगिल नहर के किनारे-किनारे तक गर्जन करते हुए भारतीय सेना ने शत्रु की युद्ध सामग्री नष्ट-भ्रष्ट कर दी और वहां के आंगन में छा गए। बेवकूफ शत्रु ने इसका मतलब यह निकाला कि भारतीय सेना डर गई है। पाक सेना ने उनकी बढ़त रोक दी है। वे लोग अपने इसी भ्रमकर आत्मविश्वास का शिकार बन गए। थोड़ी-सी विजय प्राप्त करके वे मद में इतराने लगे। उन्हें इस बात का स्वप्न में भी एहसास नहीं हुआ कि भारतीय सेना व्यूह रचना के लिए जरा पीछे हटकर शत्रु को अपनी सुविधानुसार घेरने के लिए जरा आगे बढ़ने को उकसा रही है। जरा आगे क्या बढ़े कि मियां अयूब ने मन के मोदक फोड़ते हुए रेडियो से घोषित किया—'पाकिस्तान ने भारत को बार-बार चेतावनी दी थी कि कश्मीर जिसका है, वह उसके हवाले कर दो। मगर भारतीय नेता न्याय और सौजन्य की भाषा नहीं दंड की भाषा [illegible] [illegible]यों से हिन्दू जाति की गुलामी की जो [illegible] लाचारी यही है कि वह सीधे नहीं

मानती।'

इसके अतिरिक्त उन्होंने सिखों को भी फुसलाने की कोशिश की। अपने आकाओं की इस प्रतिध्वनि को अखबारों ने भी दोहराया कि—'भारत को पानीपत की जो प्यास रहती है, वह पूरी होगी। पाकिस्तान एक तरह से इतिहास के तकाजे को ही पूरा कर रहा है। मगर सिखों से हमारी कोई दुश्मनी नहीं। हम उन्हें अपना मित्र मानते हैं और हिन्दू साम्राज्यवाद से उन्हें मुक्त कराने की भरसक कोशिश करना चाहते हैं। हम सिखों के देव स्थानों को कोई नुकसान नहीं पहुंचाएंगे।'

इसके बाद पाकिस्तान ने अपना पहला आरमर्ड डिवीज़न बड़े विश्वास से खेमकरण की ओर तेजी के साथ बढ़ाया। उनको तो यह विश्वास था कि टैंकों की गड़गड़ाहट मात्र से भारतीय वीर पीछे हट जाएंगे। रुआब डालने के लिए पाकिस्तान ने पहले हमले में ही १५० के करीब टैंक भारतीय सीमा की ओर बढ़ा दिए। इतनी जल्दी में वह अपने मैकेनिकों को भी साथ नहीं ला सका था। इस गलती के लिए उसे बाद में पछताना पड़ा था। पाक सैनिक इन टैंकों पर बैठे फूले नहीं समा रहे थे। मानो किसी नये यान पर चढ़कर सैर को निकले हों। उन्हें क्या मालूम था कि यह सैर उनके लिए यमलोक का पासपोर्ट लेकर आई है।

खेमकरण के मोर्चे का ठीक से संचालन करने के लिए उसकी व्यूह रचना अर्धचन्द्र के रूप में की गई थी। इसी मोर्चे पर रणबांकुरे - ने भी वीर गति प्राप्त की थी। इसी मोर्चे के एक ओर । कहानी के नायक कै० सुरेन्द्रकुमार भी रण में जूझे।

१६ सितम्बर की सुबह। सूर्योदय हो रहा था। कैं० सुरेन्द्रकुमार ने उदय होते हुए भास्कर से प्रेरणा ली। वह अपनी बटालियन के साथ खालड़ा सेक्टर में स्थित राजा के गांव में आ पहुंचे। यहां से पाक सीमा कुल डेढ़ मील है, राजा के गांव के दूसरी ओर पाक सेना डटी हुई थी। दूसरे दिन सुबह ही योजना बनाकर कैं० सुरेन्द्रकुमार ने पाक सेना पर जबरदस्त हमला किया। ६ घण्टे भयंकर युद्ध हुआ। पाक सेना त्राहि-त्राहि कर उठी। इस रणबांकुरे के नेतृत्व में भारतीय सेना ने शत्रु को ६ मील पीछे खेमकरण की ओर धकेल दिया। जैसे चतुर शिकारी अपने शिकार को घेरकर मारता है उसी तरह से कैं० सुरेन्द्र-कुमार की बटालियन ने पाक सेना को शिकस्त पर शिकस्त देते हुए पीछे धकेलना शुरू किया। कैं० सुरेन्द्रकुमार आगे रहकर अपनी बटालियन को बराबर प्रोत्साहन देते रहे। जहां भी अपनी टुकड़ी को धीमा पड़ते देखते वहां खुद पहुंचकर मोर्चा संभालते। उनकी तत्परता व जवांमर्दी ने मानो सारी बटा-लियन में प्राण फूंक दिए। शत्रु उनपर खार खाए बैठे थे। एक तोपची ने निशाना ताककर अपनी तोप का मुंह कैं० सुरेन्द्रकुमार की ओर कर दिया। एकदम से ५ गोलियां उनके सीने को आकर भेद गई। लगभग ११ बजे कैं० सुरेन्द्रकुमार धरती माता की गोद में गिर पड़े। पर अपनी अन्तिम सांस तक वह सेना को—'आगे बढ़ो जवानो' का नारा देकर प्रेरणा देते रहे। अपने वीर नायक को धराशायी होते देख भारतीय सेना का खून खौल उठा। वह बजरंगबली की जय का नारा लगाकर शत्रु पर पिल पड़ी। पाक सेना के पांव उखड़ गए। वह इस भयंकर आक्रमण

का मुकाबिला न कर सकी और मैदान छोड़कर भाग खड़ी हुई।

युद्धक्षेत्र से कै० कुमार को फौरन पट्टी के हस्पताल में पहुंचाया गया। और वहां से दूसरे दिन ही फिरोजपुर के मिलिटरी हस्पताल में ले आए गए। उन पांच गोलियों ने उनकी विशाल छाती इतनी छलनी कर दी थी कि २३ सितम्बर को सुवह ९ वजे उनका जीवन दीप टिमटिमाया और जीवन-ज्योति अमरज्योति से जा मिली।

जब अबोहर में उनके वीरगति प्राप्त होने की खवर पहुंची तो पचास हज़ार की आवादी की वह नगरी शोक-सागर में डूब गई। यहां पर ही उनके पिता वर्षों से साहित्य सदन के सर्व-सर्वा होकर जनसेवा में लगे हुए हैं। उनकी लोकप्रियता का अन्दाज़ इसीसे लग सकता है कि मातृभूमि के इस वीर लाड़ले की शव यात्रा में आवोहर की सारी जनता उमड़ी पड़ रही थी।

शहीद के पिता मास्टर तेगराम ने अपने वीर पुत्र को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए कहा—एक वाप के लिए सबसे कीमती चीज़ होती है उसका लायक होनहार वेटा। धरती माता, तेरी लाज की रक्षा के लिए मैंने उसे भी तुम पर अर्पण कर दिया। यह कहकर वह विलख-विलखकर रो पड़े।

मित्रों ने ढाढस देते हुए कहा—मास्टर जी ऐसी मौत तो भाग्य से मिलती है। सुरेन्द्र अकेला आपका नहीं सारे देश का गौरव वन गया है।

मास्टर जी ने आंसू पोंछते हुए कहा—नहीं भाई, मैं

उसके वीरगति पाने से दुखी नहीं हूं। काश उसका विवाह हो गया होता और वह अपनी निशानी छोड़ जाता तो उस सिंह शावक को भी मैं बाप का बदला लेने योग्य बना सकता।

युद्ध पर जाने से लगभग दो महीने पहले १९ जुलाई को अबोहर में ही सुरेन्द्रकुमार की सगाई हुई थी। पर २३ सितम्बर को वे युद्ध में शहीद भी हो गए।

उसकी चिता को प्रणाम करके माताओं ने कामना की हमारी कोख से भी ऐसा ही वीर पुत्र पैदा हो। युवतियों ने कामना की कि हमें ऐसा ही वीर बहादुर बांका वीर पति रूप में मिले।

अमर शहीद सुरेन्द्रकुमार जिन्दाबाद!!!

श्री राजेन्द्रसिंह से हमने सीखा जीवन देना,
इसके बदले कुछ न चाहना और नहीं कुछ लेना।
भारत माता के चरणों में जीवन-फूल चढ़ाना,
नया वीरता का गुण गौरव आगे और बढ़ाना।।
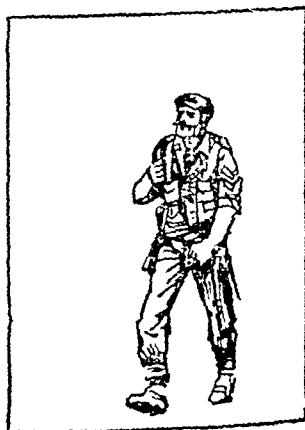
बांका सिपाही राजेन्द्रसिंह

पिलखुवा गांव के रणबांकुरों में जाट युवक सिपाही राजेन्द्रसिंह का नाम अपनी वीरता तथा बलिदान के लिए हमेशा अमर रहेगा। उन्होंने बहादुर जाटों की परम्परा को बड़ी शान के साथ निभाया। उनके पिता चौधरी वेदरामसिंहजी अपने बेटे के अन्तिम पत्र को एक अमूल्य निधि की तरह संभाल कर रखते हैं। लाहौर के मोर्चे पर वीरगति प्राप्त करने से दो दिन पहले राजेन्द्रसिंह ने अपने पिता को लिखा था—

"पूज्य पिता जी, आपको मालूम होगा कि पाकिस्तान के साथ हमारी घमासान लड़ाई चल रही है। मैं इस समय अमृत-

सर और लाहौर के बीच पाकिस्तान सीमा के आठ-दस मील भीतर हूं। यहां पर हमारी और पाकिस्तान की घमासान लड़ाई हुई है परन्तु हमने पाकिस्तानी दुश्मनों को बुरी तरह से खदेड़ कर अपने मोर्चे बहुत मजबूत बना लिए हैं। पाकिस्तानी हमारे सामने टिक नहीं पा रहे हैं। वे गीदड़ की तरह भाग रहे हैं। आप चिन्ता बिल्कुल मत करना। आपका बेटा सच्चा जाट का छोरा है। वह जाटों की वीर परम्परा को पूरी तरह निभाएगा।

आशा है कि अब की बार मक्का काफी अच्छी हुई होगी। लिखना कितनी हुई।

घर पर सबको यथायोग्य।

आपका बेटा,
राजेन्द्र"

राजेन्द्र के पिता चौधरी वेदरामसिंह को जब भी कोई सान्त्वना देने आता, वह अपने पुत्र के इस पत्र को पढ़कर उसे जरूर सुनाते। उन्हें इस बात का गौरव है कि उनके बहादुर बेटे ने देश की रक्षा के लिए अपने को कुर्बान कर दिया और जाटों की वीर परम्परा को कायम रखा। यह कहते-कहते उनकी आंखें सजल हो उठीं कि बेटे ने भारत की मां-बहनों की इज्जत बनाए रखने के लिए, अपने देश के हरे-भरे खेतों की रक्षा के लिए अपनी जान लगा दी। मेरा लाडला मक्का के खेतों के विषय में पूछता चला गया। अब वह भुट्टे खाने नहीं आएगा। मुझे यह तसल्ली है कि राजेन्द्र की तरह अनेक वीर देश की स्वतन्त्रता व गौरव बनाए रखने के लिए बलिदान हो गए। स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए मेरे लाल ने भी अपना फर्ज अदा किया, इस बात

का मुझे बड़ा गौरव है।

चौधरी साहब ने बताया कि जब वह छोटा था तभी से उसको बड़ा शौक था फौजी वर्दी पहनने का। पढ़ाई में शुरू से बड़ा ध्यान लगाता था। चार साल पहले शहीद राजेन्द्रसिंह ने पिलखुआ के राजपूत रेजीमेण्ट इन्टर कालिज से हाईस्कूल पास किया। उसके बाद वह जाट रेजिमेंट में भर्ती हो गया। अक्टूबर १९६२ में जब चीन ने भारत पर हमला किया तो लद्दाख के मोर्चे पर राजेन्द्रसिंह भी बड़ी बहादुरी से लड़ा था। एक बार तो उनकी टुकड़ी घिर गई थी। अपनी आधार चौकी से उनका सम्पर्क टूट गया था। तब भी राजेन्द्रसिंह और उनके साथियों ने कई दिनों तक भूखे रहकर भी हिम्मत नहीं हारी और जब तक पीछे से मदद नहीं आ गई मोर्चा संभाले रखा।

लाहौर के मोर्चे पर भी राजेन्द्रसिंह तथा उसके साथियों के साहस प्रशंसनीय थे। ये वीर नौजवान शत्रु के दांत खट्टे करने को उतावले हो रहे थे। खंदकों में बैठे-बैठे वह इस बात की इन्तजार में थे कि कब शत्रु से आमने-सामने मुकाबला हो। जाट लोग वैसे भी बड़े जिन्दा दिल होते हैं। मौत के मुंह में जाकर भी उनकी मस्ती कायम रहती है।

राजेन्द्र की रेजिमेंट के एक पंजाबी जाट से किसी साथी ने कहा—सरदार जी, दुश्मनों के जेट गरजते चले आ रहे हैं। ज़रा दुबक कर बैठो।

सरदार जी जो दुश्मन के नाम से ही भड़क उठते थे, चट से बोले—अजी तुसी की कहन्दे हो? दुश्मना दे ए केड़े नए जेट

ग्रा गए ? एक जट तां ग्रसी पंजाब दे हा, दूसरे जट राजेन्द्रसिंह दे गाव दे हैन । ग्रा नए जट कैड़े हैन । ज़रा पास ग्रा जान देग्रो, न ऐना दे पासे भन्न दित्ते ते कहना । (ग्रजी ये जाट कौन से हैं । एक तो पंजाब के जाट हैं, दूसरे राजेन्द्रसिंह की ग्रोर के जाट हैं। ये तीसरे कौन से जट ग्रा गए दुश्मन के ? ग्रच्छा, ग्राने तो दो, इनकी हड्डिया चूर न कर दी, तो कहना ।)

राजेन्द्रसिंह ने हंसकर कहा—बादशाहो ! इनका मतलब जेट हवाई जहाज से है ।

खंदकों में हंसी का फव्वारा फूट पड़ा । इस बातचीत के थोड़ी देर बाद ही पाक सेना ने पैटन टैंकों को ग्रागे करके जोरदार हमला किया । भारतीय सेना ने डटकर मुकाबिला किया । राजेन्द्रसिंह ने ताक-ताक कर गोले पैटन टैंको पर मारे । चालको के मारे जाने पर पैटन टैंक वहीं खड़े रह गए । राजेन्द्र का हौसला बढ़ा । उसने ग्रागे बढकर खुले में ग्राकर एक तोपची पर निशाना साधा । इसी बीच उनके सीने में ग्राकर एक गोली लगी ग्रौर वे धराशायी हो गए । ग्रपने साथी को गिरते देख ग्रन्य जवानों पर मानो खून चढ़ गया । वे शत्रु पर टूट पड़े ग्रौर उन्हें खदेड़ कर ही दम लिया ।

राजेन्द्रसिंह के वीरगति प्राप्त करने पर सेना के हैडक्वार्टर से जो पत्र चौधरी वेदरामसिंह को ग्राया उसमें लिखा था—ग्रापका पुत्र सिपाही राजेन्द्रसिंह मातृभूमि की रक्षा करते हुए गत २२ सितम्बर को शहीद हो गया । वह एक कुशल ग्रौर बहादुर सैनिक था । दुश्मन को खदेड़ने में उसने ग्रतुल साहस ग्रौर वीरता का परिचय दिया । उसकी मृत्यु से बटालियन को भारी

क्षति पहुंची है।

भारत का बांका सिपाही चला गया पर उसकी कर्तव्य-निष्ठा की सुगन्ध स्वाधीन भारत के चमन में हमेशा महकती रहेगी।

तो आज हमको कसम है वतन शहीदों की,
खून निखरेगा जमीं पर कि रंग लाएगा।
एक भी इंच यहां पर न बढ़ सकेगा कोई,
आज दुश्मन को हर जर्रा सबक सिखाएगा॥

शौर्यगाथा का धनी

जैसलमेर में भाटी राजपूत अपना एक विशेष स्थान रखते हैं। राणा प्रताप के समय में भी उन्होंने अपनी स्वाधीनता के लिए अपूर्व बलिदान किया था। भाटी राजपूतों की शौर्य गाथा इतिहास में अमर रहेगी। इसी इतिहास प्रसिद्ध भाटी जाति में हमारे कहानी के नायक सिपाही पूर्णसिंह भाटी का जन्म हुआ था।

जैसलमेर जिले में हाबुर नाम का एक गाव है। ठा० जयसिंह भाटी इस गाव के एक सम्भ्रान्त गृहस्थ हैं। पूनमसिंह भाटी इन्हींके सुपुत्र थे। पूर्णसिंह का बचपन में खेल-कूद की ओर विशेष ध्यान था। जब उमर कुछ बड़ी हुई तो कसरत और

अखाड़े का भी शौक हुआ। खा-पीकर कसरती शरीर लौह सलाख की तरह मजबूत बन गया। इस वांके नौजवान की सिल की तरह चौड़ी छाती, फड़कते हुए भुजदंड, चमकती हुई आंखें और मुसकान से खिला हुआ चेहरा लोगों का मन सहज ही मोह लेता था। स्वभाव से विनम्र पर वड़ा निर्भीक। किसीपर यदि कोई अत्याचार करता तो यह डट कर उसका मुकावला करता। गांव में इतनी धाक थी कि सब डरते थे। बाबा हंसी-हंसी में कहा करते—अजी इसका तो सबको इतना डर है, मानो पुलिस का कोई बड़ा सिपाही ही हो।

पूनम हंसकर कह देता—बाबा जी, देखना एक दिन मैं पुलिस में भर्ती होकर नाम कमाऊंगा।

और सचमुच २१ वरस की आयु में पूनमसिंह पुलिस में भर्ती हो गए। ट्रेनिंग खत्म करके पांच वरस तक उन्होंने जैसलमेर ज़िला पुलिस में वड़ी ईमानदारी से अपनी ड्यूटी दी।

भारत पाक सीमा पर जैसलमेर ज़िले के रामगढ़ थाने की एक चौकी है जिसे भुट्टोवाला चौकी कहते हैं। राम जाने अपने नाम से मिलती-जुलती इस चौकी पर मियां भुट्टो को क्या रोष था या उनकी सेना का सर फिर गया था कि एक पाक टुकड़ी ने चुपके से इस चौकी पर एकदम हमला कर दिया। यहां पर उस समय केवल नौ सिपाही ही नियुक्त थे, जिनका नेतृत्व हवलदार लूणसिंह कर रहे थे। पाक की टुकड़ी मोर्टर गनों और वमों से लैस होकर इस चौकी पर चढ़ आई। हमला अचानक और बहुत ज़ोरदार था। पर जहां पर पूनमसिंह जैसे रणवांकुरे मौजूद हों,

वहां शत्रु की किस प्रकार दाल गल सकती थी। पूनमसिंह ने अपने साथियों को ललकारा—भाइयो, पाकिस्तानी सेना को उनकी बदनीयती की सजा देने का आज सुअवसर हाथ लगा है। दिखता है उसे राजपूती तलवार के पानी का पता नहीं। यह दूसरी बात है कि आज लड़ाई तलवारों के बदले बन्दूकों से होती है, पर हमारी नसों में है तो वही पूर्वजों का खून, जिन्होंने आततायी के सर भुट्टे के सदृश उड़ाकर जैसलमेर को आज़ाद किया था।

दूसरा साथी बोला—हां, पूनमसिंह जी, इस भुट्टो चौकी पर एक बार शत्रु के सिरों को भुट्टों की तरह उड़ाने का खेल फिर से खेल लिया जाए क्या हर्ज है।

इतने में शत्रु की तोपें गरज उठीं। भारतीय वीर सिपाहियों ने मोर्चा संभाल लिया। शत्रु संख्या में डेढ सौ थे। उन्होंने चौकी को तीन ओर से घेर लिया। फिर घेरा तंग करते हुए स्वचालित बन्दूकों तथा हथगोलों से बमबारी करते हुए आगे बढने लगे।

उन्होंने सोचा होगा कि डेढ़ सौ के मुकाबले में कुल आठ या दस सिपाही कितनी देर टिक सकेंगे? परन्तु वाह रे वीर पूनमसिंह! उसने आगे बढकर शत्रु से लोहा लिया। इतने में एक हथगोला पड़ने पर हवलदार लूणसिंह का एक हाथ उड गया। अब पूनमसिंह ने झट से उनका स्थान लेकर अपनी छोटी-सी टुकड़ी का सचालन संभाला। पूनमसिंह ने सोचा कि किसी तरह से पाकिस्तानियो की टुकड़ी के मुखिया को मार दिया जाए तो बाकी लोग भेड़ों की तरह खुद ही भाग जाएगे। उन्होने विशेष सुविधा के स्थान पर खड़े होकर शत्रु पर गोलिया बरसानी

शुरू कीं। उनके अचूक निशाने से कई शत्रु धराशायी हुए। पूनमसिंह का हौसला बढ़ा। उन्होंने जान की परवाह न करते हुए, शत्रु की गोलियों के बौछार के बीच में से कुछ आगे को आकर पाकिस्तानी रैंजरों के कमाण्डर अफज़ल खां को निशाना बनाया और उनका निशाना ठीक बैठा। अफजल खां चारों खाने चित्त जा गिरा। अपने नायक को गिरते देख कुछ पाक सैनिक आगे बढ़े। पूनमसिंह ने एक-एक करके सात और दुश्मनों को मार गिराया एक के बाद एक सात लाशें बिछ गईं।

भारतीय सिपाहियों के हौसले अब भी सात आसमान छू रहे थे, पर अफसोस कि गोलियां सब की खत्म हो चुकी थीं। पूनमसिंह ने सोचा, तो क्या हम बेहथियार होकर मारे जाएंगे ? पर नहीं, वीर कभी नहीं झुकते। उसके सामने शत्रुओं की लाशें बिछी हुई थीं, उनकी छाती पर गोलियों की बेल्ट चमक रही थी। वीर भाटी की नजर उन्हीं गोलियों पर थी। काम खतरे का था पर करना तो था ही।

पूनमसिंह ने सामने मौत को खप्पर फैलाए खड़ा देखा। मानो उन्होंने मौत को भी एक बार ललकार कर कहा—भवानी, चुपचाप खड़ी रहो। थोड़ी देर की बात है। अन्तिम गाथा अपने लहू से लिखने से पहले ज़रा शत्रुओं के सर से अपने पितरों का तर्पण और कर लूं। रुकी रहो। तुम्हें भी शत्रुओं की मुंडमाला तो पहना दूं। फिर तुम्हारे खप्पर में अन्तिम आहुति अपने प्राणों की भी डाल दूंगा। रुको ! कुछ क्षण मुझे और बख्श दो।

रणचंडी सचमुच में ठमककर मानो वीर पूनमसिंह का ..डव नृत्य देखने लगी। वीर भाटी पूनमसिंह अपने मोर्चे से

उछले और मरे हुए पाकिस्तानियों तक पहुचकर उनकी छाती से बन्दूक की गोलियों की पेटी उतार लाए। रणचंडी उनके सर पर चढ़कर मानो अट्टहास कर उठी। साथी रोकते रहे पर पूनमसिंह यह कहकर कि तुम लोग इन गोलियों से शत्रु को भूनो, मैं अभी गोलियों की और पेटिया उतार कर लाता हू—फिर मोर्चे से बाहर को लपके।

रणचंडी अपने लाल को ले जाने के लिए उतावली खडी थी। उसने मानो कहा—बस बेटा, बस। तेरे स्वागत के लिए पितर आए हुए है।

अचानक शत्रु की एक गोली पूनमसिंह के सीने में लगी और वह वीर भारत माता की गोद में चिरनिद्रा में लुढ़क गए। पूनमसिंह के अन्य साथी पूनम के बलिदान से प्रेरणा पाकर शेर हो गए। वे तब तक डटे रहे जब तक कि उनकी दूसरी चौकी से मदद नहीं आ पहुंची और फिर जमकर युद्ध हुआ और शत्रु भाग खड़ा हुआ।

वीर पूनमसिंह भाटी जैसलमेर महारावल घडसीजी के कुवर कान्हडजी के वंशज थे। इनके वशजों ने ही मुगलों को पराजित करके जैसलमेर को आजाद कराया था। उसी वंश के रणबाकुरे पूनमसिंह ने शत्रु को लोहे के चने चबवा दिए।

दस सितम्बर को शहीद पूनमसिंह का शव जैसलमेर लाया गया। इसी वीर को श्रद्धांजलि देने के लिए जैसलमेर की दस हजार जनता उमड़ पड़ी। जैसलमेर के भूतपूर्व महाराजा, महारानी, राजमाता, राव-रंक सभी अपनी-अपनी पुष्पाजलि वीर के शव पर चढ़ाने आए। शहीद की माता ने चिता की भस्मी को

माथे पर लगाकर कहा—बेटा, तू मेरी कोख को गौरव प्रदान कर गया। तू धन्य है।

बूढ़े बाबा ने सजल नेत्रों से कहा—बच्चा, तू हमारे कुल को चार चांद लगा गया। तेरे ऋण से हम उऋण नहीं हो सकेंगे।

पत्नी ने मन ही मन कहा—मेरे देवता, तुम मुझे वीर प्रियतमा होने का सौभाग्य प्रदान कर गए। तुम्हें शत शत प्रणाम है।

भारत सरकार ने उन्हें राष्ट्रपति का पुलिस और अग्नि सेवा पदक प्रदान किया है। कोटा महारानी शिवकुमारी जी ने उनकी माता को जीवन भर मासिक राशि बांध दी। राजस्थान सरकार ने उनकी पत्नी को २५ बीघे ज़मीन तथा जीवनयापन के लिए सुख-सुविधाएं प्रदान कीं।

ग्रामवासियों ने उनको श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए एक समारोह किया और उन्होंने हाबुर गांव का नाम बदल कर पूनमनगर रख दिया।

कहते हैं कि वीरता का प्रदर्शन कायरों में भी उत्तेजना पैदा कर देता है और जो वीर हो उनके लिए तो किसी वीर की गाथा मानो प्रेरणास्रोत बन जाती है। उनके हृदय में मर मिटने की हवस पैदा कर देती है। वीरों द्वारा प्राण-विसर्जन का उत्सव मानो बार-बार मनाया जाता है। ऐसी ही एक घटना सीमा की एक पुलिस चौकी पर विराम सन्धि के कुछ दिन बाद फिर दोहराई गई। घटना भी जैसलमेर जिले की रायचण्डवाला चौकी र ही घटी। पाक सेना ने चुपके से इस चौकी पर हमला कर या था। इस सेना में जंगल विभाग के रेंजर भी शामिल थे।

भारतीय वीरों ने डटकर आठ घंटे मुकाबिला किया और पाकिस्तानी हमलावर सैनिकों व रेंजरों को खदेड़ कर फिर से रायचण्डवाला चौकी पर कब्जा कर लिया। आक्रमणकारी संख्या में अधिक थे। पर चोरों के भी कभी पाव होते हैं ? भारतीय वीरों के आगे वह टिक न सके और दुम दबाकर भागे। उनके कुछ सैनिक मारे गए और कई घायल हुए।

जब से लड़ाई बंद हुई है शत्रु युद्ध विराम रेखा को अदबदा कर सभी ओर से पार करने की चेष्टा बराबर कर रहे हैं। अपनी जनता को वह गुमराह करना चाहते हैं कि हमने भारत को शिकस्त दी है और उनकी धरती का हिस्सा हमने उनकी अपेक्षा अधिक दबा लिया है। इसीलिए वे खोई हुई चौकियों पर बार-बार हमला करने से बाज नहीं आते। अपनी हार को जनता से छिपाने के लिए उन्होंने इच्छोगिल नहर पर लकड़ी के पर्दे की ओट खड़ी कर ली है। चुपके-चुपके हमला करके वे जब कभी भी हमारे द्वारा अधिकृत हिस्से में घुस आते हैं तो तहस-नहस करने की कोशिश करते। जिस दिन रायचडवाला चौकी पर हार खाकर वे पीछे हटे, उसी दिन डोगराई के ठीक पश्चिम में एक क्षेत्र में दस-पंद्रह पाकिस्तानी सैनिकों ने युद्धविराम रेखा पार करके सुरंगें बिछाने का प्रयत्न किया परन्तु हमारे सैनिकों की ललकार सुनकर वे भाग निकले। वे साढ़े तीन इंची चार राकेट पीछे छोड़ गए।

सीमा उल्लंघन तो वे रोज़ ही कर रहे है। युद्ध में करारी हार खाकर शत्रु खिसियानी बिल्ली की तरह खंभा नोच रहे हैं।

विभिन्न क्षेत्रों में थल और आकाश में युद्धविराम उल्लंघन की शिकायतें रोज ही आ रही हैं। खेमकरण के सात मील पश्चिमोत्तर में शत्रु सैनिकों ने, जिनके पास मीडियम मशीनगनें थीं एक ऐसे क्षेत्र पर कब्ज़ा कर लिया है जो पहले उनके अधिकार में नहीं था, हमारे सैनिकों ने शत्रु को पीछे हट जाने की चेतावनी दी है और युद्धविराम उल्लंघन की शिकायत दर्ज कर दी है। एक अन्य क्षेत्र में संयुक्त राष्ट्र प्रेक्षकों ने पाकिस्तानी सैनिकों को युद्धविराम का उल्लंघन करते हुए अपनी आंखों से देखा।

लाहौर क्षेत्र में युद्धविराम सीमा लांघकर विनाशकारी कार्रवाइयां करते हुए शत्रु की गतिविधि के जो समाचार मिले हैं उनसे प्रकट होता है कि बरकी, डोगराई और इच्छोगिल नहर के आसपास शत्रु ने सक्रिय होने का प्रयत्न किया है। नहर के पूर्व जल्लो के ढाई मील दक्षिण क्षेत्र में पाकिस्तानी सैनिक खाइयां खोदते देखे गए। कुछ पाकिस्तानी सैनिकों ने बरकी में गोलियां दागीं और नहर के पश्चिमी तट पर ठिकाने संभाले। पाकिस्तानी सैनिक बरकी के चार मील उत्तर इच्छोगिल नहर के पूर्व सुरंगें बिछाते हुए देखे गए। इस प्रकार के हमले पाक सेना बराबर कर रही है। पर भारतीय सेना भी अपने-अपने मोर्चे पर सजग है। शहीद पूनमसिंह भाटी के सदृश वीर जब तक प्राण हथेली पर रखकर लड़ने के लिए इस वीरप्रसू भूमि पर हैं, हमारे देश का माथा हमेशा ऊपर उठा रहेगा।

शहीदों की चिताओं पर जुड़ेंगे हर बरस मेले,
वतन पे मरने वालों का यही बाकी निशां होगा।

रज्जी चला गया

लुधियाना जिला की तहसील समराला में एक गाव है चहला। सावन का महीना, चारो ओर मक्के के खेत लहलहा रहे थे। एक दस बरस का बालक खेत की मुडेर पर खडा अपने पिता से बोला—देखो, बापू, रामू और उसकी घरवाली ने कितने सारे भुट्टे तोड़कर अपने घर ले जाने के लिए अलग रख दिए है। ये रोज ही ऐसा करते हैं।

बापू ने बेटे के कंधे पर हाथ रखकर कहा—बच्चा, ये लोग गरीब है, ले जाने दो। गरीबो पर दया रखनी चाहिए।

बालक रजवन्त उस दिन से रामू से खुद ही कह देता—रामू,

बच्चों के लिए भुट्टे ले जाना, मत भूलना।

पं० जगन्नाथ गौड़ समराला गांव के समृद्ध किसानों में से थे। अच्छी खासी ज़मींदारी थी। भरा-पूरा परिवार था। तीन बेटे देवेन्द्रपाल, सतपाल और रजवन्तपाल तथा दो बेटियां थीं। रजवन्त पाल सबसे छोटा होने के कारण मां-बाप का बड़ा दुलारा था। इसलिए मां उसे दूर नहीं करना चाहती थी। गांव में रह-कर उसने मैट्रिक पास किया। अपने स्कूल में प्रथम आया। फिर अपने मझले भाई देवेन्द्रपाल के पास दिल्ली आकर कालिज में दाखिल हो गया। बचपन में जब गांव में कोई सैनिक आता रजवन्त उसकी बातें बड़े चाव से सुनता था। वह सपने संजोता कि काश बड़ा होकर मैं भी एक सैनिक बनूं, यूनिफार्म पहनूं। बन्दूक लेकर अकड़कर चलूं। जब वह जवान हुआ तो ऊंचा लंबा कद, भरा-पूरा शरीर, पढ़ाई और खेलकूद में सबसे आगे। मैट्रिक पास करने के बाद उसने अपने पिता से कहा—बापू, मैं जे० एस० डब्ल्यू० की प्रतियोगिता में बैठना चाहता हूं।

बापू ने कुछ सोचकर जवाब दिया—बेटा, मैं तो चाहता हूं हूं कि मेरे बेटे देश की सेवा करें। पर तेरी मां इस बात को नहीं मानेगी कि उनका लाडला छोटा बेटा सेना में दाखिल होकर दूर चला जाए। बुढ़ापे में मां को अपने बच्चों से अधिक प्यार हो जाता है फिर तू तो छोटा होने के कारण उनकी आंखों का तारा है।

समय पंख लगाकर उड़ चला। रजवन्त सैनिक अकादमी देहरादून में दाखिला पाने में सफल हो गया। पिता को

बुझाकर वह देहरादून चला गया। उसने भाइयों को कहा—मा को मत बताना कि मैं देहरादून ट्रेनिंग प्राप्त करने जा रहा हू।

सन् १९६२ में उसे कमीशन मिल गई। देहरादून में बिताया गया यह दो बरस का समय रजवन्त के मन में कुछ ऐसी अमिट छाप छोड़ गया, कुछ ऐसी मुखद स्मृतिया संजो गया, जो आगे जाकर उसके जीवन का पाथेय बन गई। यहा वह अपने मामा के यहा साधना से मिला। साधना उसकी ममेरी बहन की सहेली थी। उनके पड़ोस में ही रहती थी। धीरे-धीरे यह परिचय घनिष्ठता में बदलता और उनका प्रेम मर्यादा से बधा हुआ पनपता रहा।

आखिरकार विदाई का दिन भी आ पहुंचा। उस दिन दोनों जने शाम को एक रेस्टोरेण्ट में मिले। साधना ने आसुओं से बोझिल अपनी पलकों को झुकाये-झुकाये ही पूछा—रज्जी, तो तुम जा रहे हो?

—हा साधना, जाना तो होगा ही। सिपाही का जीवन तो देश के लिए ही होता है।

अपने आचल में अपने आसू समेटते हुए साधना सिसक उठी। रज्जी का मन हुआ साधना को अपनी बाहों में समेटकर सान्त्वना दे। पर रेस्टोरेण्ट के एकात कोने में बैठे होने पर भी वहा आस-पास एकात न था। रज्जी ने अपनी मजबूत हथेली में साधना का कोमल हाथ लेकर धीरे से दबाया और होंठो ही होंठों में फुसफुसाया—साधना डार्लिंग, धीरज धरो। मैं दूर रहते हुए भी मन से हरदम तुम्हारे पास ही रहूगा।

इतने में बैरा खाने-पीने की तश्तरिया लेकर आता दिखाई

दिया। साधना ने अपने आपको संभाल लिया। खा-पीकर रजवन्त और साधना एक पहाड़ी की ओर को निकल गए। पेड़ों के एक झुरमुट के पास आकर रजवन्त रुक गया। साधना के हृदय की धड़कन कुछ तेज़ हो गई।

कुछ देर दोनों मौन रहे। साधना को लगा रजवन्त कुछ कहना चाह रहा है। पर बात उसके होठों तक आकर अटक रही है। उसने बोझिल मौन को तोड़ते हुए कहा—रज्जी, अब तो तुम्हारी ट्रेनिंग यहां खत्म हो गई। अब आगे का क्या प्रोग्राम है ?

—हां, यही बात बताने के लिए मैं तुम्हें यहां लाया हूं। ड्यूटी पर जाने से पहले मैं अपने गांव जाऊंगा।

—क्या पोस्टिंग का आर्डर आ गया है ?

—हां, बारामूला में मेरी पोस्टिंग हुई है।

साधना कुछ घुटी-घुटी सी रह गई। क्या कहे ? तो अब उसका रज्जी चला जाएगा। इतनी दूर ! रज्जी भी सोच रहा था, इन दो सालों के परिचय में वह जो कुछ साधना को समझ सका है, मन में वह जितनी रम गई है, क्या ये सुखद यादें उसे बिछड़ने पर विकल नहीं करेंगी ? पिछले दो सालों के चित्र उसकी आंखों के आगे घूम गए। उसे याद आया, मामी ने एक दिन साधना की मां को इस रिश्ते के लिए संकेत किया था। साधना की मां ने इस बात की चर्चा अपने पति से की। उन्होंने यह कहकर बात टाल दी कि अभी कुछ कहना बहुत जल्दी होगा। वैसे लड़का सुन्दर, स्वस्थ और होनहार है, परन्तु इस समय सीमा पर अशांति है, पक्की तौर पर कुछ कहा नहीं जा

जब मौका प्राएगा, बात करेंगे।

प्रभी दो-चार दिन की ही तो बात है, पासिंग प्राफ परेड थी। साधना भी सपरिवार वहां निमन्त्रित थी। साधना की मां ने रज्जो की पीठ ठोककर उसे कमीशन प्राप्त करने पर मुबारिकबाद दी और कहा—बच्चा, यहा से जाकर हमें भूल मत जाना।

रज्जी ने मां के पीछे खड़ी साधना की ओर देखते उत्तर दिया—नहीं, माटी, आप लोगों को भला कैसे भूल सकता हूं। हां, आप लोग मुझे न बिसार देना। खत लिखती रहिएगा। परदेश में सैनिकों को इससे बड़ी तसल्ली रहती है।

रज्जी के अभिप्राय को साधना समझ गई थी। बाद में वही शब्द उसके कानों में मानो गूंज रहे थे।

अन्धेरा झुका आ रहा था। रज्जी ने साधना का हाथ अपने हाथ में लेकर कहा—साधना, तुम मुझे खत जरूर लिखती रहना। तुम्हारी पढ़ाई बाकी है उसके बाद तुम्हारी माताजी ने हमारे रिश्ते की बात का जवाब देने को कहा है। मैं पूछना चाहता हूं, तुम्हें मेरी बनना मजूर है?

साधना ने अपनी भीगी पलकों को ऊपर उठाया। कुछ कीमती मोती आंचल में बिखर गए। मानो मन का भेद बता गए।

एक-दूसरे के प्रति वफादार रहने की प्रतिज्ञा कर दो प्रेमी बिछड़े। फिर मिलने की उम्मीद लेकर।

१६६२ से लेकर १६६५ अगस्त तक रजवन्त बारामूला में तंगधार पर ड्यूटी में तैनात रहा। बीच-बीच में छुट्टियों में घर आता, मां से मिलता, घर की सुध उसे हमेशा रहती। भाई को उसने लिखा—भाई साहब, मां को मत बताना कि मैं सीमा पर तैनात हूं। उन्हें नाहक चिंता होगी। रुपये भेज रहा हूं। आप ज़मीन खरीद लेना। पिता जी बीमार हैं। मैं इस बात की कल्पना भी नहीं कर सकता कि ६ फुट ऊंचे मज़बूत काठी के हमारे पिता, पलंग पकड़ लेंगे। मैं घर आना चाहता हूं, पर ऐसे मौके पर जब कि देश की सीमाओं पर खतरा है, मेरा आना उचित नहीं।

उसी साल ३ अक्तूबर को रजवन्त के पिता का स्वर्गवास हो गया। यह समाचार उसके लिए बड़े दुख का था। वह विकल हो गया। हवाई जहाज़ से जालन्धर पहुंचा और वहां से सीधा अपने पिता की समाधि पर आकर उसने मत्था टेका। उसे इस बात का बार-बार पछतावा आता था कि आखिरी वक्त उनकी सेवा नहीं कर सका।

जुलाई १६६५ में ७वीं जाट बटालियन के साथ वह जम्मू-स्यालकोट एरिया में तैनात हुआ। मुस्तैदी से काम करने पर वह कैप्टेन बना दिया गया था। रजवन्त अब बड़ा उतावला हो गया कि उसे अधिक जोखिम का काम सौंपा जाए। वह बेचैन था। कुछ करके दिखाने की तमन्ना उसके मन में थी। इसी बीच ऐसे अपनी ममेरी बहन उमा का पत्र मिला था कि साधना की कि शादी दिल्ली में किसी बिज़नेस-मैन से हो गई है, उसका दिल

टूट गया था। मा ने लिखा था कि साधना आखिरी दम तक शादी के लिए इंकार करती रही। पर उसके मा-बाप ने समझाया कि रजवन्त का क्या भरोसा। सीमा पर खतरा है। वह अभी दो साल न लौटे तब तक क्या तू क्वारी रहेगी। हमारे बुढ़ापे का सोच, अच्छा लड़का मिल रहा है फिर इन्कार क्यों?

उमा ने लिखा कि साधना जाते समय कह गई थी कि चाहे शरीर से मैं पराई हो गई, पर मन से मैं रजवन्त की ही रहूगी।

इस पत्र में रजवन्त ने लिखा था—उमा तुम साधना को मेरी ओर से लिख देना कि एक हिन्दू नारी की तरह सच्चा पतिव्रत धर्म निभाये। मुझे भूल जाए। जिसको तन सौंपा उसी को मन से भी पूजना उसका धर्म है। मैं जब तक जीता रहूगा उसके सुख, सौभाग्य और कल्याण की कामना करूगा। हमारे मिलन के सयोग नही थे। उसकी याद मेरे मनमें है। वह मेरे मन-मन्दिर की देवी है।

रजवन्त को चौकसी की ड्यूटी पर तैनात किया गया। वह शत्रु की गतिविधि का पता रखता और अपने आधार कैम्प को खबर करता। उसकी टुकड़ी के लोग अपने कप्तान साहब का बड़ा आदर करते थे। रजवन्त काम में खुद बडा चौकस था और ऐसा ही अपने सहयोगियो से आशा करता था।

पाक के जिन हिस्सों पर भारत का कब्ज़ा हो गया था, वहां की असहाय जनता के प्रति किसी प्रकार का दुर्व्यवहार न होने पाये इस बात का रज्जी को बडा ख्याल रहता था। उसने अपने भाई को पत्र में लिखा कि इन मुस्लिम भाइयों को देखकर मुझे

अपने गांव के बचपन के साथी याद आते हैं। हमारा इमामदीन भी तो ऐसा ही था। मैंने एक बूढ़ी मुस्लिम महिला देखी जिसकी शक्ल सूरत हमारी गांव की बूढ़ी काकी सामी से मिलती थी। जब उसने हाथ उठाकर मुझे दुआ दी तो मेरी आंखों में आंसू आ गए। काश, यह लड़ाई न हुई होती। काश, हम अच्छे पड़ोसियों की तरह रहे होते। काश, पाकिस्तान ने हमला करने की गलती न की होती।

६ सितम्बर की घटना है। भयानक रात। शत्रुओं ने आस-पास भीषण बम वर्षा की थी। युद्ध क्षेत्र में चारों ओर लाशें ही लाशें नज़र आ रही थीं। धुआं भरा आकाश। रजवन्त तथा उसके साथी अपनी ड्यूटी पर तैनात थे। एक खाई में रजवन्त भी बैठा हुआ शत्रु की आहट ले रहा था कि अचानक एक गोला आकर खाई में पड़ा। रजवन्त बुरी तरह घायल हो गया। पर उसने अपने आधार शिविर तक शत्रु की हलचल का सन्देशा पहुंचा दिया था। चोट भयानक लगी थी। खून बहुत बह गया था। कमजोरी और बेसुधी ने रजवन्त को घेर लिया। जब उसे होश आया तो उसने अपने आपको हस्पताल में पाया। होश में आते ही वह चिल्लाया—मारो, मारो, रोको शत्रु को देखो भाग न पाये। अरे मेरे हाथ पांव क्यों बांध दिए हैं। छोड़ो मुझे। मेरी राइफल कहां है।

नर्स ने उसे नींद लाने की दवाई देकर शांत रखा।

वहां से रजवन्त को देहरादून के मिलिटरी हस्पताल में भेज दिया गया। खबर पाकर जान पहिचान वालों का तांता हस्प-

ताल में लग गया। मामा, मामी, साधना के माता-पिता आदि सभी आये। रजवन्त को भूली बिसरी यादें ताजी हो आईं। उसकी आंखें साधना को ढूंढती रही।

जब मंझला भाई देवेन्द्रपाल आया तो उसने हाथ बढ़ाकर उनके पांव छुए और बोला—भाई साहब, बीबीजी (माताजी) को मत बताना कि मैं घायल हो गया हूं। मैं बिल्कुल ठीक हूं। मामूली चोट है, जल्दी ही अच्छा हो जाऊंगा। बीबी जी नाहक घबरायेंगी।

रजवन्त के घाव ठीक होते दिखाई नही दे रहे थे। फिर देवेन्द्रपाल के लिए दिल्ली से जहा कि वह नौकर थे देहरादून बार-बार आना भी सम्भव नहीं था। इधर रजवन्त जल्दी चगा होकर मोर्चे पर वापिस जाने के लिए उतावला हो रहा था। इस कारण वह कह-सुनकर रजवन्त को दिल्ली के मिलिटरी हस्पताल मे ले आये। बारूद के कारण घाव सैप्टिक हो गए थे। इसलिए आपरेशन करना जरूरी था। जब रजवन्त को आपरेशन थियेटर मे ले जा रहे थे तो एक मित्र उससे मिलने आया, उसने मिलने के लिए चिट लिखकर भेजी। रजवन्त ने कहला भेजा—घबराओ मत मैं आपरेशन के बाद बिल्कुल ठीक हो जाऊंगा। जल्द ही हम मिलेंगे। भाई कह गया कि मा को आपरेशन की खबर मत करना। मैं खुद अच्छा होकर जाऊंगा और उनके पांव छुऊगा।

आपरेशन थियेटर में टेबल पर लेटे-लेटे रजवन्त को अपनी साधना की याद बार-बार आती रही। काश कि वह एक बार मिल जाती। भाई [illegible] की थी। इन विचारो मे

क्लोरोफार्म की बेहोशी उस पर छा गई।

कौन जानता था कि यह बेहोशी उसे चिरनिद्रा में सुला देगी। अफसोस आपरेशन असफल रहा। जब मां को रजवन्त के स्वर्गवास की सूचना मिली वह तड़प कर रह गई। उसका विलाप नहीं सुना जाता था। वह अपने बड़े बेटों को कहती—जब रजवन्त घायल होकर आया था, तुम लोगों ने मुझे क्यों नहीं बताया। मैं तो अपने बेटे को मौत के मुंह से भी छीन लाती। अरे मां की शक्ति को तुम लोगों ने मामूली समझा, तभी न मेरा रज्जी चला गया।

सैनिक सम्मान के साथ रज्जी की अर्थी निकली। जब जनाजा जा रहा था तो एक मोटर पास आकर रुकी और उसमें से एक महिला भीड़ को चीरती हुई देवेन्द्र के पास आई और भर्राई हुई आवाज में उसने पूछा—भाई साहब, यह क्या है। रज्जी तो ठीक है।

देवेन्द्र ने डबडबाई आंखों से कहा—साधना! रज्जी अब कहां, यह उसकी बरात है निगम बोध तक उसे पहुंचाने जा रहे हैं। अच्छा हुआ, तुम आ गईं पर कुछ देर हो गई तुम्हें आने में।

यह सुनते ही, 'रज्जी चला गया' कहकर साधना पछाड़ खाकर गिर पड़ी।

◇◇◇

मुद्रक : रूपक प्रिंटर्स, दिल्ली-६